सत्यापन क्रमांक :
RAJHIN/2015/60530

ओ३म्

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

हिन्दी मासिक

वर्ष : ६ अंक : १० १ अक्टूबर २०२० जोधपुर (राज.) पृ.:३६ मूल्य १५० ₹ वार्षिक

येनातिपुण्यपरिपाकवशादुपेतं मुक्तिस्वरूपमखिलोपकृतो विहाय।
दत्तं समस्तमपि शर्म विषं निपीतं सर्वानन‌ंतसुखमापयता यतेन।।

जिन्होने अपने पूर्व उपार्जित पुण्यपुञ्ज के वश प्राप्त हुए मुक्तिसुख को भारत के उद्धार के लिए छोड़कर स्वयं कई बार विष खाया और समस्त जनों को वैदिक धर्मरूप ईश्वराज्ञा पर चला कर अनंत सुख का भागी बनाया।।

- अखिलानन्द शर्मा (रचयिता- दयानन्द दिग्विजय महाकाव्य)

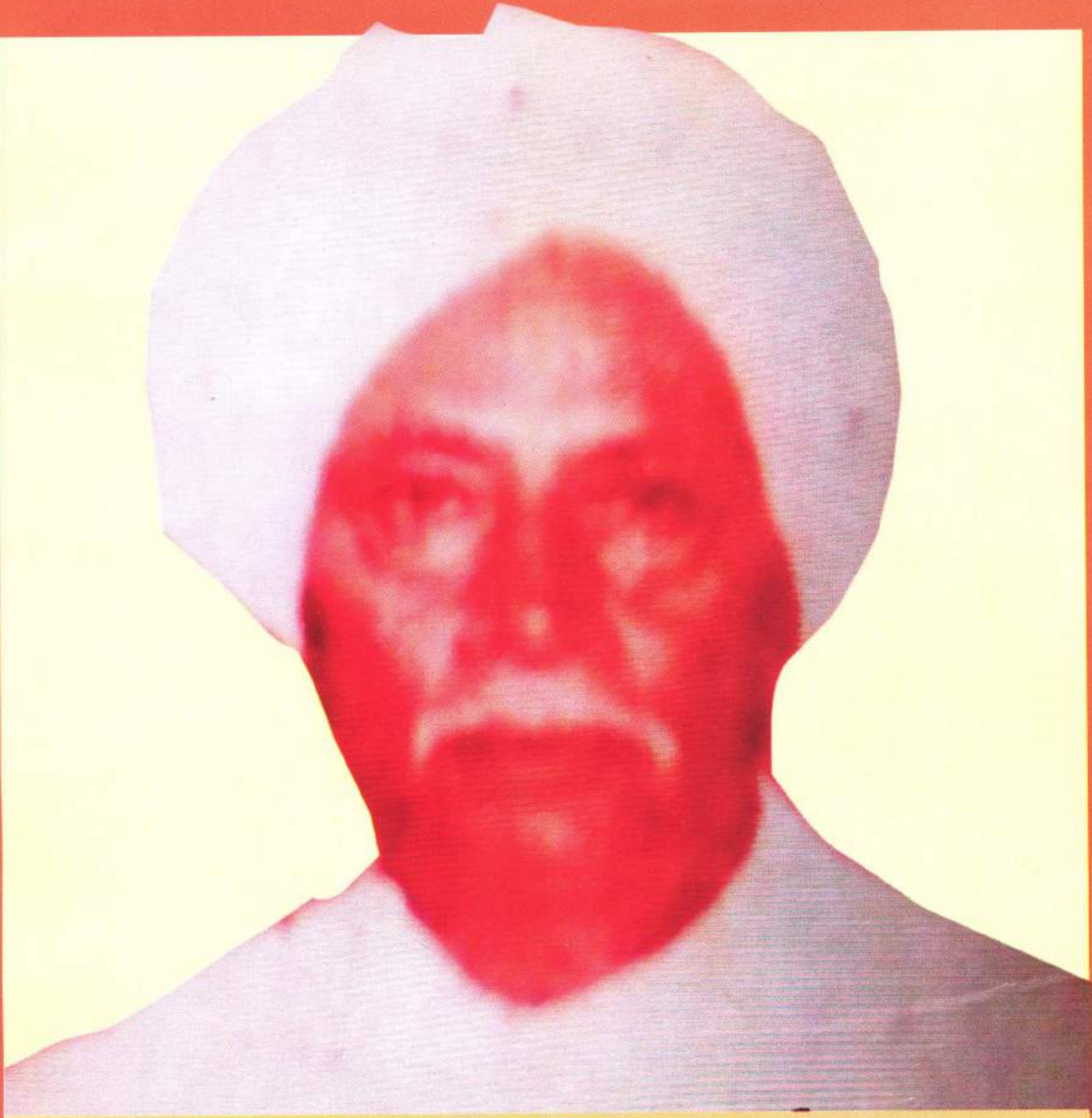

पं. भगवद्दत्त जी 'रिसर्च स्कॉलर'

जन्मः कातिक कृ 2 सं. १९५० वि. शुक्रवार २७ अक्टूबर १८९३

निधनः मार्गशीर्ष शु. 3 सं. २०२५ वि. शुक्रवार २२ नवम्बर १९६८

जिस देश में १९ प्रकार की स्वच्छ इतिहासपरक सामग्री विद्यमान थी, जिस देश के आचार्यों ने परमसूक्ष्म बुद्धि से उस सामग्री का लक्षण पूर्वक विभाजन विशेष कर दिया था तथा जिस देश के साक्षात्कृतधर्मा ऋषियों ने अपनी उदार धी से अत्यंत श्रेष्ठ इतिहास लिखा। उस देश में 'इतिहास लेखन विद्या नहीं थी' – यह कहना अन्याय की पराकाष्ठा अथवा अज्ञान की चरम सीमा है।

-पं. भगवद्दत्त जी

कृण्वन्तों विश्वमार्यम् । -ऋग्वेद ९।६३।५

सबको श्रेष्ठ बनाओ

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश का मुख्य प्रयोजन

महर्षि दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व, कृतित्व, व उनके द्वारा लिखित समस्त साहित्य तथा उनके सार्वभौमिक अद्वितीय कार्यों व सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार, स्थापना व व्यवहार में साकार करने के लिये कार्य करना ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर का मुखपत्र

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

वर्ष : ६ अंक : १०
दयानन्दाब्द : -१९७
विक्रम संवत् : माह-आश्विन २०७७
कलि संवत् ५१२०
सृष्टि संवत् :१,९६,०८,५३,१२१

सम्पादक मण्डल :
प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर
डॉ. सुरेन्द्रकुमार, हरिद्वार
डॉ. वेदपालजी, मेरठ
पं. रामनारायण शास्त्री, सिरोही
आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

कार्यवाहक सम्पादक :
कमल किशोर आर्य
Email: sampadakmdsprakash@gmail.com
9460649055

प्रकाशक : 0291-2516655
महर्षि दयानन्द सरस्वती
स्मृति भवन न्यास, जसवन्त कॉलेज
के पास, जोधपुर ३४२००१

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है । किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र जोधपुर ही होगा ।
Web.-www.dayanadsmritinyas.org.

वार्षिक शुल्क :१५० रुपये
आजीवन शुल्क : ११०० रुपये
(१५वर्ष)

अनुक्रमणिका

	क्या	कहाँ
१.	सम्पादकीय....	४
२.	मुक्ति सोपान.....	११
३.	वेद-वचन.....	१३
४.	हमे वध का पात्र मत....	१५
५.	दयानन्द कौन है ?.....	१६
६.	आर्यसमाज का इतिहास....	२४
७.	ऋषिगाथा....	२८
८.	अथ ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका	३०
९.	ऋषि स्मृति सम्मेलन.....	३४

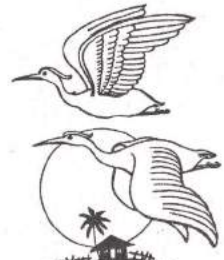

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास
बैंक ऑफ बडौदा खाता संख्या-01360100028646
IFSC BARB0JODHPU
यह पांचवा अक्षर जीरो है

सम्पादकीय

'टका धर्मष्टका कर्म' बनाम 'अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभं'

हमने वह कहानी सुन रखी है जिसमें गृह त्याग कर वैराग्य पथ के पथिक बनकर चल रहे एक दंपत्ति में से आगे चल रहे पति को एक स्वर्ण आभूषण से ठोकर लगती है। वह यह सोचकर पैर से उस आभूषण पर मिट्टी डालता है कि वैराग्य पथ पर भी सहगामिनी बनी पीछे आ रही उसकी पत्नी का मन इस आभूषण पर डोल ना जाए और वह वैराग्य पथ से विचलित ना हो जाए। किंतु जब पास आकर पत्नी कहती है कि मिट्टी पर मिट्टी क्यों डाल रहे हो तो वृद्ध पति अपनी पत्नी के वैराग्य पर मुग्ध हो जाता है कि स्वर्ण को स्वर्ण समझने वाला उसका वैराग्य अभी कच्चा है, जबकि पत्नी स्वर्ण को मिट्टी जानकर पक्की वैराग्यवती हो चुकी है।

ऐसे भारत से बदल कर ६000 वर्षों से हमारा भारत कैसा होता चला जा रहा है–इसकी एक झलक पहले महाराज श्री भर्तृहरि के शब्दों में जानिए: –

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः स पण्डितः स श्रुतवान् गुणज्ञः ।
स एव वक्ता स च दर्शनीयः सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति ।।41।।(नीतिशतक से)

अर्थात् जिसके पास धन है वही उच्च कुल का है, वही जानकार पंडित है, वही शास्त्रों का ज्ञाता है, वही दूसरों के गुणों का आँकलन करने की योग्यता रखता है, वही प्रभावी वक्ता है, उसी का व्यक्तित्व दर्शनीय है। यह सब इसलिए कि सभी गुण धन के प्रतीक कांचन अर्थात् स्वर्ण पर निर्भर हैं। धन है तो वे गुण भी हैं, अन्यथा वे भी नहीं हैं।

अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि दयानंद सरस्वती ने भी 'कपट पंथी बैरागी के मुख से लगभग ऐसी ही बात दो श्लोकों के माध्यम से बताई है। अवलोकन करें–

टका धर्मष्टका कर्म टका हि परमं पदम् ।
यस्य गृहे टका नास्ति हा ! टकां टकटकायते ।।१।।
आना अंशकला प्रोक्ता रूप्योऽसौ भगवान् स्वयम् ।
अतस्तं सर्व इच्छन्ति रूप्यं हि गुणवत्तमम् ।।२।।

अर्थात् टका के विना धर्म, टका के विना कर्म, टका के विना परमपद नहीं होता। जिस के घर में टका नहीं है वह हाय! टका–टका करता–करता उत्तम पदार्थों को टक–टक देखता रहता है कि हाय! मेरे पास टका होता तो इस उत्तम पदार्थ को मैं भोगता।।१।।

क्योंकि सब कोई सोलह कलायुक्त अदृश्य भगवान् का कथन श्रवण करते हैं सो तो नहीं दीखता, परन्तु सोलह आने और पैसे कौड़ीरूप अंश कलायुक्त जो रुपैया है वही साक्षात् भगवान् है। इसीलिए सब कोई रुपयों की खोज में लगे रहते हैं, क्योंकि सब काम रुपयों से सिद्ध होते हैं।।२।

भारत के दो विश्वप्रसिद्ध चिंतक लोक में प्रचलित किसी मान्यता का वर्णन करते हैं और उनके द्वारा फैलाए जा रहे विष के प्रति सावधान करते हैं तो सावधान होना चाहिए। दो चिंतकों द्वारा वर्णितवित्त प्रेम की इस विडम्बना कीकुछ झलकियाँ वर्तमान सेः—

(अ) 'टका धर्मष्टका कर्म'

रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा, चिकित्सा, सुरक्षा आदि मनुष्य की परम आवश्यकताएँ है।

1. पहले रोटी की बात आती है तो अन्न की पैदावार पर ध्यान जाता है। प्राकृतिक साधनों से ही धरती स्वतः पर्याप्त देती है। किन्तु कुछ मतावलंबियों द्वारा बीबीयों को खेतियाँ मान लिए जाने के कारण विश्व में हुए जनसंख्या विस्फोट से और मुख्यतः कम या बिना श्रम के अधिकतम धन अर्जित करने के लिए भूमि में बिना सोचे समझे रासायनिक उर्वरकों का उपयोग करके अधिक उपज ले रहे हैं।

अन्न, कन्द, मूल, फल आदि उगाने के लिए देश में उपजा प्रत्येक दाना, तरकारी या फल बीज देता है, कन्द प्रकन्दादि पड़े पड़े ही उगते हैं। लेकिन अधिक पैसे के लिए अधिक पैदावार लेने के लिए विदेशों से प्रयोगशालाओं में आनुवंशिक रूप से परिवर्तित बीजों का आश्रय लेते हैं, जो गुणहीन उत्पाद तो बहुत देते हैं लेकिन बीज नहीं देते।

कम समय और श्रम मे अधिकतम धन कमाने के लिए ही कृषि उपकरण वाहन आदि के प्रयोग से पैट्रोल और डीजल का उपयोग बढ़ा तो धुँआ भी मिलेगा। पराली पर गिद्धदृष्टि रखने वाले लोग पैट्रोलियम के धुँए से नुकसान नहीं बताते।

खाद्य निगम के गोदामों मेंघटिया अनाज की खरीद, खाद्यान्न की कमी होना, राशन वितरण में घोटाला आदि पैसों के लिए ही होता है। गोदामों में पानी की आवक और चूहों को इसलिए कम नहीं किया जाता, ताकि चूहों से खाया और पानी से सड़ा अनाज बाहर फैंकना बताकर उसे खुर्द खुर्द किया जा सके।

इसके बाद जमाखोरों, दलालों और सट्टेबाजों द्वारा धन के लालच में खाद्य पदार्थों की कीमत बढ़ाई जाती है जो सभी लोग कभी प्याज और कभी दालों में उछाल को देखने वाले है। भूसी और खल बोर्नवीटा के भाव मिलते हैं और आलू वैफर्स के भाव। यह सब खिलवाड़ मात्र पैसे के लिए ही तो होता है।

२. कपड़ा दूसरी आव यकता है जो खेती से भी जुड़ा है और रासायनिक उद्योगों से भी। रासायनिक वस्त्रों से चर्मरोग बढ़ते हैं व पर्यावरण भी दूशित होता है। वस्त्र उद्योग के म ीनीकरण से हथकरघा, कुटीर और लघु उद्योगों के विनाश की कहानी अंग्रेजों द्वारा मैनचैस्टर की कपड़ा मिलों को काम देने के लिए हथकरघा को नष्ट करना, नील की खेती तबाह करने से लेकर वर्तमान शासन की कपड़ानीति भी धन केन्द्रित है, हित केन्द्रित नहीं।

३. तीसरी आवश्यकता मकान सरकारी संस्थाएं तो गुणवत्ता से बनाती नहीं हैं, और आपको बनाने की अनुमति के लिए चाहे जितने जूते घिस लो, भोग तो चढ़ाना ही होगा। ग्राम पंचायतों से लेकर स्थानीय निकाय कस्बा, जिला और महानगरों के विकास निगम या प्राधिकरण भ्रष्टाचार के गढ़ बने हुए हैं जो राष्ट्रीय संपदा या संसाधनों को बेचकर अपना मोटा

पेट भरने की कोशिश करते हैं इनके द्वारा कराए गए जन सुविधाओं और आवासों की गुणवत्ता किसी से छुपी नहीं है।

४. चौथी आवश्यकता शिक्षा की –सरकारी विद्यालयों के शिक्षक के सेवाकाल का आधा समय तो मनचाही जगह पर पदस्थापना लेने और वहीं टिके रहने में निकल जाता है। उसके लिए भी पैसे देने पड़ते हैं। वे पैसे वसूल नहीं करेंगे? तबादला उद्योग सरकारों में बड़े जोर शोर से चलता है। यह छुपी हुई बात नहीं है। बहुत समाचार आते हैं, पोशाहार के लिए विद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्या अतिरंजित करके बताने के। कोरोना काल में विद्यालय बंद होने पर भी पोशाहर वितरण दर्शाया जाता है सिर्फ पैसे के लिए। सरकारी विद्यालय महाविद्यालय और विश्वविद्यालय व्यवसायिक शिक्षण संस्थान आदि योग्य विद्यार्थी तैयार करने में असमर्थ है। अतः इनका भी निजीकरण वृहद् स्तर पर जारी है। किंतु एक निजी प्राथमिक विद्यालय खोलने से लेकर महाविद्यालय, विश्वविद्यालय और व्यवसायिक प्रशिक्षण संस्थान खोलने के लिए जो पैसा घूस में देना पड़ता है–उसका एक नजारा अभी राजस्थान विश्वविद्यालय के कुलपति की गिरफ्तारी से सामने आया है।

श्री मैथिलि भारणगुप्त जी ने भारत की तत्कालीन शिक्षा व्यवस्था देखकर कहा भी था: **"बिकती यहाँ शिक्षा अहो, जो शक्ति है तो क्रय करो। यदि शुल्क आदि न दे सको तो मूर्ख रहकर ही मरो।।"** पर्याप्त है ये पंक्तियाँ यह बताने में कि शिक्षा व्यवस्था में पैसे का ही बोलबाला है।

५. अब चिकित्सा पर भी विचार लेते हैं। चिकित्सा का यह हाल है कि जिसके पास पैसा अर्थात चैक, या जैक नहीं है, बड़े डॉक्टर उसके सिर्फ सपने में आते हैं। एक वस्तु की तरह उसे अस्पताल में पटक दिया जाता है और मरने का पूरा सामान किया जाता है। बिना मेहनत की भारी भरकम वेतन उठाना अनधिकृत ही तो है, सभी सुरक्षात्मक उपकरणों का सामान्य से कई गुना अधिक दाम पर क्रय करना अखबारों में अक्सर आता है। लक्ष्मी को छाती से लगाकर सेवा को श्मसान भेज रखा है। वैसे भी चिकित्सा संस्थानों में चिकित्सक अस्पताल की बजाए घर पर मरीज अधिक देखते हैं। मेडीकल और पैरामेडिकल कर्मी अस्पताल के संसाधनों– जैसे दवाइयों, स्ट्रेचर, एंबुलेंस, स्वच्छता के साधनों,कम्बल, गद्दे, चद्दर, तकिया, दूध और राशन को रोगियों के लिए काम में कम और अपने आराम और आय के साधनों के लिए अधिक काम में लेते रहते हैं। बिल तो रोजाना प्रत्येक पलंग पर बिस्तर चद्दरों की धुलाई का पूरा लिया जाता है। किन्तु हफ्तों बदले नहीं जाते हैं, संक्रमण से मरे मरीज तो मरे, हमें तो पैसा चाहिए।

६. अब सुरक्षा पर भी विचार करते हैं। पहले सीमाओं पर सुरक्षा! रक्षा सौदों में घूस के मामलों में सरकारे बदल जाती है, प्रधानमंत्री तक को चोर बोल दिया जाता है, बोफोर्स सौदे के लिए श्री राजीव गांधी को मरने के बाद भी कलंकित किया जाता है। नौसेना के जहाज खरीद में घोटाले पर तो फिल्म बन चुकी है। रक्षा घोटालों में पूर्व सैन्य अधिकारियों को सजा तक हो चुकी हैं और कई राजनेता जॉच या मुकद्दमों का सामना कर रहे हैं। कारण: पैसों का बोलबाला। अधिक लिखना उचित भी नहीं।

आन्तरिक सुरक्षा पर दृष्टि डालें तो इसे भी पैसे के लिए धराशायी पाते हैं। पैसों के लिए पुलिस वाले अपराधियों से सांठगांठ करते हैं।अपराधी बेखौफ अपराध करते हैं।

कई बार धनी लोग चोरियों और आगजनी तक के मामलों की शिकायत पुलिस में इसलिए नहीं करते कि पुलिस के चक्कर में पड़ गए तो चोरी या आगजनी से अधिक नुकसान हो जाएगा।

अखबारों में खबर पढ़ते हैं कि फलां अपराध करने वाले व्यक्ति पर पहले ही पन्द्रह बीस और अधिक भी आपराधिक मामले चल रहे हैं। पुलिस उनके विरुद्ध सख्त मामला नहीं बनाती, अदालतें उनके विरुद्ध नरम रुख रखती हैं– पैसे के लिए। लेकिन पुलिस वाले कहते हैं अदालत छोड़ देती है और जज लोग कहते हैं कि कानून ही ऐसा है! किसी आदतन अपराधी के लिए कोई न्यायाधीश जमानत की सुनवाई के दौरान पत्रावली पर यह लिख दे कि इसके मुक्त विचरण से समाज को खतरा है, तो क्या कोई उसकी जमानत करा सकता है? क्या कोई न्यायाधीश का हाथ रोकता है? क्या न्यायाधीश नहीं जानते कि ये लोग समाज के लिए खतरा बनेंगे। बलात्कार के मुकदमे का सामना कर रहे लोग कैसे मुक्त होकर पीड़िता की और उनके परिजनों की हत्या कर देते हैं? ऐसे मामलों में सजा के पहले हकदार इन अपराधियों की जमानत स्वीकार करने वाले न्यायाधीश क्यों नहीं होते?

जेल से होने वाली वारदातों को देखकर ऐसा लगता है कि जेल का प्रशासन अपराधियों के हाथ में है। जेलों से मोबाइल मिलना, हथियार मिलना, शराब मिलना, पार्टियां होना आम बात हो गई है। यदि जेल में बिना पैसे के दम पर यह सब सामान नहीं जाता तो किस तरह से जाता है? सच्चाई यह है कि यदि कोई गैर आदतन आकस्मिक अपराधी जेल पहुँच भी जाता है तो जेल प्रशासन के नुमाइंदों और वहां मौजूद बड़े अपराधियों को यदि 'खुश' नहीं किया जाए तो उसका रहना मुहाल हो जाता है– समाचारों में कोई भी यह पढ़ सकता है।

अनिवार्य आवश्यकताओं के बाद अब शासक और शासित दोनों वर्गों की थाह लेते हैं। शासन के तीन भाग व्यवस्थापिका, न्यायापालिका और कार्यपालिका होते हैं।

७. व्यवस्थापिका में संसद से लेकर जिला, नगर, कस्बे या ग्राम के स्थानीय निकाय आते हैं जिनमें सरकारें जनता चुनती हैं। अर्थात् राजनेताओं के चुनाव जीतने के बाद के कार्यस्थल। राजनीति आज सबसे बड़ा और केवल लाभ का व्यापार बन चुकी है। एक भी जनसेवक ऐसा नहीं मिलता जिसकी पूंजी जनसेवा में पिछले वर्ष से कम हो गई हो।

धन के लिए राजनेता वस्तुतः बहुत नीचे गिर जाते हैं, किंतु गिर कर भी कितने धनी बन जाते हैं, जब अपने ही दल को छोड़कर दूसरे दल की सरकार बनवाने के लिए वे पैसे लेकर दलबदल करते हैं? कभी कहा जाता था कि अपराध अर्थात बेईमानी में ईमानदारी जिंदा है, वचन पालन जिंदा है। किंतु ये चुने हुए जनप्रतिनिधि तो संविधान की शपथ लेकर वचन देते हैं और धन के लिए उसे भी तोड़ देते हैं।

अपने विरुद्ध लाए गए अविश्वास प्रस्ताव के विरुद्ध वोट देने के लिए विपक्षी सांसदों को रिश्वत देने के मामले में भारत के पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्री पी वी नरसिंह राव को सजा

तक सुनाई जा चुकी है। अभी राजस्थान में जो राजनैतिक उठापठक और बाड़ाबन्दी चली थी उसमें एक विधायक की कीमत 2करोड़ आंकी गई थी। अर्थात् 20 अरब रुपए में समस्त राजस्थान की सत्ता खरीदी जा सकती है।

महानगरों, शहरों, कस्बों, तहसीलों, पंचायत समितियों और ग्रामों के स्थानीय निकाय वे माध्यम है जो उनको आवंटित बजट और संसद तक के जनप्रतिनिधियों द्वारा प्रदत्त बजट से उनके द्वारा इंगित/स्वीकृत कार्यों का क्रियान्वयन कराते हैं। यहाँ राजनेताओं, प्रशासकों और अभियंताओं की भरमार होती है। सामान्य नागरिक के जन्म से मृत्यु तक के पंजीकरण से लेकर निर्माण, व्यापार, सड़का, सामुदायिक भवन आदि अधिकांश कार्य यहीं होते हैं।

जन्म प्रमाण पत्र लेने से लेकर मृत्यु प्रमाण पत्र बनाने तक कहाँ पैसे का बोलबाला नहीं है। यहाँ का तंत्र जनता के काम के लिए जनता से पैसे लिए बिना हिलता ही नहीं है। यही कारण है कि इन छोटे से छोटे निकायों का चुनाव जीतने के लिए सिर फूटते हैं, भण्डारे चलते हैं, धन व सामग्री वितरित होती है और हत्याएँ भी हो जाती हैं।

करोड़ों के घोटाले में रंगे हाथों पकड़े गए अधिकारी जेल जाकर भी कुछ समय बाद कार्य पर बुला लिए जाते हैं पैसे के लिए। अमानक और घटिया सामग्री से बने पुलों एवं भवनों को सरकारी इंजीनियर पास कर देते हैं और कई बार नागरिकों की मृत्यु का कारण बनते हैं किंतु पैसे लेकर के भ्रष्टाचार करने वाले ये लोग पैसे देकर के छूट जाते हैं। अन्यथा रंगे हाथों पकड़े गए लोग पुनः ड्यूटी पर नहीं आते।

८. व्यवस्थापिका की बात करें तो कोई भी सरकारी कार्यालय ऐसा नहीं बचा जो ठेकेदारों से कम लागत पर अधिक नही तो ठेकेदारों किसी कुशलता और समयबद्धता से कोई कार्य करें। किंतु ऐसा निकम्मा सरकारी तंत्र ठेकेदार के कार्य पर निगरानी रखता है। तभी तो सीवरहोल कवर सड़क से ऊपर रहता है, सड़कें बारिश से ठीक पहले बनती है। सैकड़ों करोड़ के घोटाले नहीं करें तो वह मंत्री नहीं या अखिल भारतीय स्तर का अधिकारी ही नहीं! कई विभागों के चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी आधा अरबपति मिलते हैं। पैसे लेकर प्रतिद्वंदी ठेकेदारों से लेकर विदेशी गुप्तचरों तक को सूचनाएं बेचने के मामले अक्सर खबरों में आते रहते हैं। बजरी का खनन बंद करने के आदेश है। किंतु बजरी के अवैध खनन और अवैध परिवहन ने कितनी जानें ली है! इन बजरी तस्करों का खनन विभाग और पुलिस से गठजोड़ मुख्य समाचारों में आते हैं। किंतु क्या न्यायपालिका, व्यवस्थापिका और विधायिका तीनों ही निर्योग्य नहीं है बजरी खनन संबंधी कानून या व्यवस्था बनाने में? अवैध धन के बंटवारे के अतिरिक्त इनकी कोई असहायता या निर्योग्यता हो तो जनता को बतानी चाहिए।

सारे सरकारी तंत्र में आउटसोर्सिंग का बोलबाला हो गया है मानो सरकारी अधिकारी और कर्मचारी सब निकम्में हो। विभागीय लागत अधिक और ठेके से लागत कम बता कर कार्यों को आउटसोर्स करने वाले अधिकारी और मंत्री ही तो होते हैं। लेकिन निकम्मे और खर्चीले सिर्फ निचले कर्मचारियों को घोषित कर उनके पदों को समाप्त कर बेरोजगारी में वृद्धि की जाती है। अधिकारियों के पद अथाह रूप से बढ़ रहे हैं। कर्मचारी होते हुए भी काम नहीं कर पाना, नहीं करवा पाना अधिकारियों की निर्योग्यता ही तो है। किंतु सच्चाई यह है कि वे

कमीशन न देने वाले कर्मचारियों से काम लेने की जहमत उठाए बिना अपनी शर्तों पर ठेकेकर ठेकेदारों से मोटा कमीशन लेना चाहते हैं। अब सिर्फ सरकार ठेके पर चलाना शेष है। देखें वह कब होता है! अंग्रेजी राज में ठेका ही तो होता था। राज चलाने के लिए कंपनी को सौंप दिया जाता था और कंपनी पैसे लेकर किसी स्थानीय रेजिडेंट को जिम्मेवारी देती, उसे कौंचती रहती और वह जनता को कौंचते रहता।

९. न्यायपालिका के बारे में पूर्व में लिखा गया पर्याप्त और समझदारों के लिया संकेत हैं। एक ताजा हो आयी स्मृति साझा कर लेता हूँ। वर्षों पहले स्मृति भवन शाखा में जाते समय खाखी वर्दी में अदालत के एक चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी को नित्य साईकिल पर मिठाई, नमकीन आदि ले जाते देखते थे। अदालतों के चक्कर में उनके कर्म भी देखे। कई साल बाद पुल पर उनकी गति बहुत धीमी देखी। पूछा तो पता चला मधुमेह और रक्तचाप के मरीज बन गए। मैनें साईकिल पर बंधे डिब्बों की ओर इशारा करते पूछा– कारण ये तो नहीं है? उनकी ऑखों में आग थी! सच से डाम लगता है न! हॉं! हमारे आर्यसमाज की व्यायामशाला को पौराणिक हिन्दू संगठनों के साथ मिलकर हड़पने का शड्यन्त्र चल रहा है। सैकड़ों प्रामाणिक दस्तावेज प्रस्तुत करने पर भी न तो पुलिस अपराधियों के विरुद्ध कार्यवाही करती है, न अदालत आदेश देती है। पुलिस और न्यायालय में अनपढ़ तो नहीं ही है।

१0. अब प्रजा की भी बात कर लेते हैं। पैसे के लिए रिश्तो का खून कर दिया जाता है, अपने ही खून को बेच दिया जाता ,है अपनी कोख किराए पर दे दी जाती है। कोरोना संक्रमण के इस संकट काल में पैसे बचाने के लिए श्रमिकों को निकाल देने वाले उनके नियोक्ता, इन श्रमिकों के लिए सरकारी पैसा जारी होने के बाद भी उन तक राशन नहीं पहुंचाने वाले नेता और अधिकारी, उन्हें बेसहारा सड़कों पर छोड़कर उनकी जान के ग्राहक बने वे विक्रेता– जो सिर्फ कोरोना के नाम से जनता से अत्यधिक दाम बढ़ाकर पैसे ले रहे हैं। पैसे के लिए लोग आर्यसमाज में आते हैं, आर्यसमाज की चल अचल संपत्ति से पैसे बनाने के समस्त कार्य करते हैं, संस्कारों से दक्षिणा के अतिरिक्त भी अन्य आय के साधन करते हैं और बहुत से लोग ऐसे हैं जिनको आर्यसमाज से, महर्षि दयानंद से, वेद, वैदिक वांग्मय से या देश और विश्व के कल्याण से, सत्य और धर्म से कोई लेना देना नहीं होता। लेकिन क्योंकि ग्यारह व्यक्ति मिलकर आर्यसमाज खोल सकते हैं इसलिए वे भी आर्यसमाज तो नहीं किंतु विवाह संस्कारों से सिर्फ आय करने के लिए आर्यसमाज खोलते हैं और संचालित करते हैं, जिनके दलाल इधर–उधर कचहरी में सिकारों की तलाश में घूमते रहते हैं।

(आ) 'अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभं'

बहुत संक्षेप में इंगित मात्र कर रहा हूँ।

१. रासायनिक खाद के प्रयोग से लालची किसान भूमि को ऊसर कर रहे हैं, कृषकों को मुख्य रूप से और उपभोक्ताओं को भी कैंसर दे रहे हैं। नहरी पानी की उपलब्धता से रासायनिक खादों के उपयोग से हरित क्रांति में देश में सर्वाधिक योगदान करने वाले पंजाब के कृषकों में कैंसर इतना अधिक हो रहा है, कि पंजाब से बीकानेर आने वाली एक

रेलगाड़ी का नाम ही कैंसर स्पेशल रख दिया गया है क्योंकि इस गाड़ी में अधिकांश यात्री बीकानेर में कैंसर का इलाज कराने आने वाले कृषक और उनके परिजन ही होते हैं।

२. जीएम बीजों के उपयोग से नैसर्गिक देशी फसलें विनाश के कगार पर है और विदेशों पर निर्भरता अत्यधिक बढ़ रही है।

3. हम वुहान कोरोनाजनित तालाबंदी में जलंधर से हिमालय का दिखना भूले नहीं है। यह सिर्फ यातायात के धुँए में कमी से संभव हुआ था। इनके उपयोग से गोवंश से मिलने वाली खाद और सेवा से वंचित होना पड़ा है। मशीनी खेती से होने वाले पर्यावरण प्रदूषण से सारी देश पीड़ित होता है। मौसम का तंत्र बिगड़ता है। वर्षा भी प्रभावित होती है।

४. संरक्षण के अभाव में वस्त्रों के पारिवारिक, कुटीर और लघु उद्योग बंद हो गए, बेरोजगारी और फलतः अपराध बढ़े हैं और चर्मरोग भी। पर्यावरण सिन्थेटिक वस्त्रों से दूषित होता है।

५. पुलिस वाले अपराधियों से मिलकर जिस समाज का निर्माण करते हैं उसका उदाहरण उत्तर प्रदेश में ३ जुलाई २०२० को कानपुर में एक अपराधी द्वारा आठ पुलिस वालों की हत्या से आप देख सकते हैं। पुलिस की धनलिप्सा और कायरता का नतीजा आए दिन छुटभैया नेताओं और अधिकारियों के द्वारा पुलिसकर्मियों और अधिकारियों की बेइज्जती के रूप में भी अक्सर देखा जाता है।

६. चिकित्सा विभाग के भ्रष्टाचार का परिणाम चिकित्सा कर्मियों को भी भुगतना पड़ता है, जब उनके स्वयं के परिजन चिकित्सा से वंचित रहते हैं।

७. एक आयसमाज के पदाधिकारी की पुत्री का प्रेम विवाह दूसरे आयसमाज में करा दिया गया। दोनों आयसमाजों के अधिकारी एक दूसरे से परिचित हैं किन्तु परिजनों से अनजान। उनके आयसमाजों की इकाई भी पैसा है और पूरा समाज भी पैसा। किन्तु समाज की वास्तविक इकाई तो परिवार है। किन्तु भ्रष्टाचार में परिवार?

८. भ्रष्टाचार कोई भी करे, वह और उसका परिवार इसी समाज का अभिन्न अंग है। इसी समाज को यदि हम बिगाड़ते हैं तो हमारे परिजन किसी अन्य समाज में नहीं जाएंगे बल्कि इस बिगड़े समाज का दण्ड भी भोगेंगे।

६. कोरोना में श्रमिकों को निकालने वाले लोग आज उन्हें तरस रहे हैं।

१0. बिना श्रम का धन बुराई, कुसस्कार, अशान्ति और बीमारियों का घर होता है।

११. पाप का धन कोई साथ नही ले गया, कितनी भी बड़ी भूमि का स्वामी बनकर भी कभी सात फुट से अधिक का उपयोग न कर पाया, तन ढकने के लिए पूरे थान का उपयोग भी न कर पाया, तुम्हारी संतानें भी न कर पाएगी। किन्तु इसके लिए जो कलंक लगाया, उसका दाग कमाई से सौ गुना धर्म व्यय करके भी कभी नहीं मिटा सकते।

—कमलकिशोर आर्य

(महर्षि दयानन्द के मिशन को कैसे क्रियान्वित करना है ? उत्तर के लिये स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज का जीवना देख लीजिए । महर्षि को समझने के प्रयास एवं उनसे हुई वार्ता से पड़े संस्कार जब मुंशीरामजी के हृदय में जागृत हुए तो वे महात्मा मुंशीराम एवं पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द में रूपान्तरण करके ही रूके । परमात्मा,वेद और महर्षि के प्रति अगाध श्रद्धा में डूबे, दलितोद्वार, देशद्वार,शुद्धि और संपूर्ण मानवता के उत्थान हेतु कल्याण मार्ग के पथिक के हृदयसर में वेद के मंत्र गोते लगाते है; गंटा बीड़ते हैं तो परिणामी ध्वनि और बौछार ''मुक्ति सोपान'' के रूप में निकलती है । तीन मुक्ति सोपानों पर पड़े मुक्ताकणों में से एक कण प्रतिमाह आपको समर्पित किया जाएगा । इस अंक में प्रस्तुत है प्रथम सोपान से प्रथम मुक्ता)

मुक्ति सोपान

प्रथम सोपान

हृदयेश्वर! चारों ओर से हृदय पवित्र करो।

त्वमग्ने द्युभिस्त्वमाशुशुक्षणिस्त्वमद्भ्यस्त्मश्मनस्परि।
त्वं वनेभ्यस्त्वं ओषधिभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः।।

ऋ.।मं.२।सू.१।मं.१।

संसार की ठोकरों से पीड़ित मनुष्य, जीवनरूपी मार्ग का पथिक, व्याकुल होकर श्रम दूर करने के लिए मार्ग के मध्य में ठहर गया है। खड़ा हो नहीं सकता, बैठता है तो आराम नहीं, लेटता है तो चैन नहीं। अन्दर से ऐसी ज्वाला भभक-भभक कर उठती है कि दम लेने नहीं देती। पथिक फिर चल देता है। आँखें फिर रूप के अन्दर खिंची चली जाती हैं, कान फिर शब्दों के दास बन रहे हैं, पग-पग पर फिर ठोकर लग रही है। पथिक की बड़ी दीन, शोचनीय दशा है। हाँ, इस नरक धाम से किस प्रकार छुटकारा हो ? नगर को छोड़कर ग्राम का आश्रय लिया, ग्राम को छोड़ कर जंगल की राह ली; किन्तु क्या दग्ध हृदय शान्त हुआ ? अन्दर से दुर्गन्ध की आंधी सी उठ रही है और तडपा रही है। अन्दर शान्ति मिलते न देखकर फिर बहिर्मुख होता है। वहाँ अनगिनत पथिक चले जाते दिखाई देते हैं। कोई कांख रहा है, कोई लकड़ी के सहारे चल रहा है, कोई चिन्ता में निमग्न जा रहा है; चेहरे अपने से भी ज्यादह पीले पड़े हुए देखता है। कुछ समय के लिए शान्ति सी प्रतीत होती हैं । सामूहिक दुःख भी दुखी से दुखी आत्मा को एक पल कें लिए शान्त कर ही देता है। इस प्रकार की शान्ति इस पथिक के हृदय में होती है।।

अब तमोगुण का पूरा राज्य हो गया, रज का चिन्ह भी बाकी नहीं रहा। जैसे कीड़े दुर्गन्ध में मस्त रहते हैं, उसी प्रकार मस्ती पथिक में भी आ गई। किन्तु अभी तक मरा नहीं सिसक रहा है, हाथ

पैर फिर भी हिल रहे हैं, कुछ जान बाकी है। कान अभी बहरे नहीं हुए। अकस्मात् एक चमत्कार सा दिखाई देता है। आंखे पूरी खोलता है तो सामने दिव्य, शान्त मूर्त्ति खड़ी है। वह चन्द्र समान शीतल कान्ति, दग्ध हृदय को एक पल में शान्त कर देती है। पथिक उठकर चरणों में सिर नवाता है और महात्मा करुण रस से सने स्वर में कहते हैं।

"हे ज्ञान के भण्डार! सर्व प्रकाशों से तुम, वेगवान् वायु से तुम, जलों से तुम, पर्वतों के शिखरों से तुम, जंगलों से तुम, औषधियों से तुम- हे मनुष्यों के पालक! तुम मनुष्यों में पवित्रता उत्पन्न करते हो!"

अमृत का पान करता करता पथिक गाढ़ निद्रा के आनन्द में मग्न हो जाता है। श्रम रहित होकर जब आंखे खोलता है तो महात्मा का कुछ पता नहीं, किन्तु उसके हृदय में कुछ उदासीनता नहीं आती। महात्मा का भौतिक शरीर सामने न देखकर भी उनके आत्मा को अन्तःकरण से अनुभव करता है। वही प्रकाशस्वरूप जो हृदय के अन्दर काम की भट्टी जला देते थे आंखों और अन्तःकरण के मलों को दूर कर रहे हैं। जिस सुन्दर रूप में नरक का दृश्य दीखता था, उसमें अब दैवीय सौन्दर्य दृष्टिगोचर होता है। क्योंकि उसमें जन्मदाता का प्रकाश-स्वरूप दीख रहा है। जिस शब्द की आंधी से हृदय में हलचल मच रही थी उसमें उसी जगज्जननी का संशोधक वेग प्रतीत हो रहा है। जिस रस के दासत्व में शरीर और मन को नष्ट कर बैठे थे उसकी पवित्र धारा के अन्दर से सब मलों को दूर कर रही है। जो पर्वतशिखर भोग के लिए उचित स्थान समझे जाकर मद्य, मांस तथा व्यभिचार के प्रलोभनों में फंसा, जीवित मनुष्यों को मुर्दा बना रहे थे वह अब अपनी स्वच्छ शोभा से पापकर्मों से घृणा दिला कर अपनी स्वच्छ वायु की गोद में लोरियां दे रहे हैं। जिन जंगलों में हिंसक पशुओं के घोरनाद हृदयों को दहलाते थे, उनके एक-एक पत्ते से प्रेम वर्षा की धारा बरस रही है। जिन औषधियों को सड़ा कर मनुष्य पागल हो रहे थे, उनकी सुगन्ध नासिकाओं को आह्लादित कर रही है।

कैसा आश्चर्यजनक भेद? क्या था और क्या हो गया? जीवन यात्री के पथिक! अपने पथ प्रदर्शक को भूल कर तूने अपनी कैसी दुर्दशा करली? अभी संभलने का समय है। नहीं नहीं, संभलने का तो सदैव समय है। हम अपनी कुटिलता से कितनी बार उस प्रेम, उस पवित्रता, उस प्रकाश के स्त्रोत से अलग होने का प्रयत्न करते हैं, किन्तु क्या इतनी ही बार हमारे कुटिलता से खड़े किए हुए बन्धन को छिन्न - भिन्न करके वह अमृत का स्त्रोत हमें आनन्दित नहीं करता रहा? पथिक! निराश मत हो। शुद्ध स्वरूप प्रकाशमय पिता, संसार की एक-एक घटना में शुद्धि का सुचार कर रहे हैं। चाहे हम उन्हें छोड़ क्यों न दें, परन्तु वह हमें कभी नहीं त्यागते। तब भय को त्याग कर उसी की प्रेम भरी गोद में क्यों न चलें?

-स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज

वेद - वचन

विद्वत्सत्कार से अविद्या-नाश

अग्ने यजिष्ठो अध्वरे देवान्देवयते यज।

होता मन्द्रो वि राजस्यति स्रिधः।। –ऋग्. ३।१०।७

<u>पदार्थः-</u> हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य वर्त्तमान **(होता)** देनेहारे **(मन्द्रः)** प्रसन्न करने तथा **(यजिष्ठः)** अतिशय यज्ञ करनेवाले आप **(अध्वरे)** अहिंसारूप यज्ञ में **(देवयते)** दिव्य गुण-कर्म-स्वभावों की कामना करने वाले के लिए **(देबान्)** उत्तम गणों को **(यज)** संयुक्त कीजिए, जिससे **(अतिस्त्रिधः)** विद्या आदि उत्तम व्यवहार के विरोधी पुरुषों को उत्तम अधिकारों से पृथक् करके **(वेराजसि)** अत्यन्त प्रकाशित होते हो, इससे उत्तम सत्कार करने योग्य हैं।

<u>भावार्थः-</u> इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमा-लंकार है। जैसे अग्नि उत्तम प्रकार से यन्त्रों से संयुक्त किया हुआ शिल्प-विद्या आदि व्यवहारों की सिद्धि करके दारिद्र्य का नाश करता है, वैसे ही पूजित हुए विद्वान् पुरुष विद्या का प्रचार करके अविद्या आदि दुष्ट स्वभावों का नाश करते हैं।

उसको जानो

एतं जानाथ परमे व्योमन् देवाः सधस्था विद रूपमस्य।

यदागच्छात्पथिभिर्देवयानैरिष्टापूर्त्ते कृणवाथाविरस्मै।। –यजुर्वेद १८।६०

<u>पदार्थः-</u> हे **(सधस्थाः)** एकसाथ स्थानवाले **(देवाः)** विद्वानो! तुम **(परमे)** पर उत्तम **(व्योमन्)** आकाश में व्याप्त **(एतम्)** इस परमात्मा को **(जानाथ)** जानो और **(अस्य)** इसके व्यापक **(रूपम्)** सत्य, चैतन्यमात्र, आनन्दमय स्वरूप को **(विद)** जानो **(यत्)** जिस सच्चित् आनन्दलक्षण परमेश्वर को **(देवयानैः)** धार्मिक विद्वानों के **(पथिभिः)** मार्गों से पुरुष **(आगच्छात्)** अच्छे प्रकार प्राप्त होवे, **(अस्मै)** इस परमेश्वर के लिए **(इष्टापूर्त्ते)** वेदोक्त यज्ञादि और उसके साधक स्मार्त्त कर्म को **(आविः)** प्रकाशित **(कृणवाथ)** किया करो।

<u>भावार्थः-</u> सब मनुष्य विद्वानों के सङ्ग, योगाभ्यास और कर्म के आचरण से परमेश्वर को अवश्य जानें। ऐसा न करें तो यज्ञ आदि श्रौत-स्मार्त्त कर्मों को नहीं सिद्ध करा सकें और न मुक्ति को पा सकें।

मोक्ष-प्राप्त्यर्थ ईश्वर को रथ बनाओ

अनवस्ते रथमश्वाय तक्षुस्त्वष्टा वज्रं पुरुहूत द्युमन्तम्।।४४० – सामवेद

<u>पदार्थः-</u>(अनवः) मनुष्य लोग (अश्वाय) शीघ्र मोक्ष-प्राप्त्यर्थ (ते) आपको (रथम्) रथ (तक्षुः) बनाते हैं। (पुरुहूत) हे बहुतों से पुकारे हुए परमात्मन्! (त्वष्टा) विद्या से प्रदीप्त पुरुष आपको (द्युमन्तम्,वज्रम्) प्रकाशमान् शस्त्र [बनाता हैं]। २. मननशील लोग शीघ्र आत्मज्ञान या मोक्ष प्राप्ति के लिये हे प्रभु ! (आपको) ही रथ बना आपके बताए मार्ग पर चलते हैं । हे प्रभो ! आपको बहुत जन-कातरजन, विद्वज्जन, तपस्वी और मुमुक्षुजन पुकारते हैं । उन सबके प्राण की आशारूप परमात्मन्! आप द्वारा प्रदत्ता वेद विद्या में पारंगत निर्माता अचूक वज्र रूपी पाप नाशक, पुण्य मार्ग के प्रकाशक आपके सहारे ही आप स्वप्रकाश स्वरूप को और मोक्ष को प्राप्त करता है ।

<u>भावार्थः-</u> ईश्वर के भक्त लोग शीघ्र मोक्षपद को प्राप्त होने के लिए परमेश्वर को ही अपना रथ बनाते हैं और उसी को सर्वपाप, शत्रु-संसहारार्थ शस्त्रभाव से कल्पना करते हैं।

ऊपर उठो

उद्यानं ते पुरुष नावयानं जीवातुं ते दक्षतातिं कृणोमि।

आ हि रोहेममममृतं सुखं रथमथ जिर्विर्विदथमा वदासि।। – अथर्ववेद ८।१।६

<u>पदार्थः-</u> (पुरुष) हे पुरुष ! (ते) तेरा (उद्यानम्) चढ़ाव होवे उन्नति होवे (न) नकि (अवयानम्) गिराव या पतन होवे । मैं (ते) तेरे लिए (जीवातुम्) जीविका और (दक्षतातिम्) दक्षता बल, योग्यता प्रदान (कृणोमि) करता हूँ, (हि) अवश्य (इमम्) इस (अमृतम्) अमर=सनातन (सुखम्)सुखदायक (रथम्) शरीर रूपी रथ पर (आ रोह) चढ़ जा, उपदेश मान (अथ) फिर (जिर्विः) पूर्ण अवस्था या परिपक्वता, विद्वत्ता को प्राप्त कर स्तुति-योग्य होकर तू (विदथम्) विचार शील मनुष्य-समाज में (आवदासि) भाषण वार्ता-व्याख्यान-चर्चा कर

<u>भावार्थः-</u> जो मनुष्य ईश्वराज्ञा और गुरु-शिक्षा से विघ्नों को हटाकर आगे बढ़ते हैं, वे संसार में स्तुति पाकर सभाओं के अधिष्ठाता होते हैं, ज्ञान के प्रसारकर्त्ता होते हैं

हमें वध का पात्र मत बनाओ

-डॉ. रामनाथ वेदालंकार

किं न इन्द्र जिघांससि, भ्रातरो मरुतस्तव।

तेभिः कल्पस्व साधुया, मा नः समरणे वधीः।। ऋग् १.१७०.२

ऋषिः अगस्त्यः। देवता इन्द्रः। छन्दः अनुष्टुप्।

• **(इन्द्र)** हे परमात्मन्! **(किम्)** क्यों **(नः)** हमें **(जिघांससि)** वध का पात्र बनाना चाहते हो? **(मरुतः)** मनुष्य **(तव)** तेरे **(भ्रातरः)** भाई [हैं]। **(तेभिः)** उनके साथ **(साधुया)** साधु प्रकार से **(कल्पस्व)** बर्ताव करो। **(नः)** हमें **(समरणे)** संग्राम में **(मा)** मत **(वधीः)** मारो।

• हे इन्द्र! हे परमात्मन्! तुम ऐश्वर्यशाली हो, वीर हो, ब्रह्माण्ड के राजा हो। इसमें सन्देह नहीं कि तुम बहुत बड़े हो, महानों के महान् हो; किन्तु तुम हमारे ऊपर प्रहार पर प्रहार क्यों किये जा रहे हो? हम एक प्रहार से संभल कर उठ भी नहीं पाते कि तुम दूसरा प्रहार कर देते हो। हमारी पीठ पर कोड़े पर कोड़े क्यों बरसाते जा रहे हो? देखो, तुम्हारे दण्ड-प्रहारों से हमारा शरीर क्षत-विक्षत हो गया है, हमारी इन्द्रियाँ जर्जर हो गई हैं, हमारा मन कराह रहा है, हमारी बुद्धि बेसुध हो गई है, हमारे प्राण क्रन्दन कर रहे हैं, हमारा आत्मा घावों से बैचेन हो तड़प रहा है। कभी तुम अपने ज्वर , अतिसार, कुष्ठ, विशूचिका, राजयक्ष्मा आदि शस्त्रों से हम पर आक्रमण करते हो, कभी हमें दुर्भिक्ष, भूकम्प अतिवृष्टि, अनावृष्टि आदि से संत्रस्त करते हो, कभी हमें भीषण दुर्घटनाओं का शिकार बनाते हो, कभी हमारे स्नेही जनों को हमसे छीनकर हमपर वज्रपात करते हो, कभी हमें काम, क्रोध आदि आन्तरिक शत्रुओं की मार से व्याकुल करते हो। हम नन्हें से जीव तुम्हारी लाई हुई इन विपदाओं को भला कैसे सह सकेंगे?

हे भगवन्! हम पर दया करो। हम तुम्हारे भाई हैं, तुम्हारे सबन्धु हैं, तुम्हारे सखा है। तुम और हम एक ही जगद्-वृक्ष पर बैठे हुए है। अन्तर इतना ही है कि हम इस वृक्ष के फलों को भोग रहे हैं, और तुम भोग से स्वतन्त्र होकर साक्षीमात्र बने हुए हो। तुम सत्, चित्, धनादि और अनन्त हो, तो हम भी सत्, चित्, अनादि और अनन्त है। तुम आनन्दस्वरूप हो, हम आनन्दमय बनने की अभिलाषा रखते हैं। भाई होने के नाते हम तुम्हारी सहायता के पात्र है। तुम हमारे साथ साधुता का, सहानुभूति का, सहृदयता का व्यवहार करो। संसार के इस विकट संग्राम में तुम हमारा वध करने पर उतारू क्यों हो रहे हो? यह सत्य है कि जो हम भोगते हैं, वह हमारे अपने कर्मों का ही फल है, पर तुम्हारी दया से क्या संभव नहीं है! तुम चाहो तो हमारे जीवन की दिशा ही बदल सकते हो, हमें निर्बुद्धि से सुबुद्धि बना सकते हो, असत्कर्मा से सत्कर्मा बना सकते हो, असुर से देवता बना सकते हो। अतः कृपा करो, बड़े भ्राता होने के नाते छोटे भ्राताओं को अपनी शरण में ले लो, हमारा उद्धार कर दो।

-वेदमञ्जरी से

दयानंद कौन है?
(पक्षपात के निष्पक्ष विरोधी)

—कमल किशोर आर्य

पशुओं को भी नैसर्गिक और स्वाभाविक रूप से सुलभ, किंतु मानव की पशुओं से पृथकता और मानव की विशिष्टता बताने में असमर्थ आहार, निद्रा, भय और मैथुन जैसी वृत्तियों के वशीभूत हो, मनुष्य के विशिष्ट गुणधर्म को भूल जाना भी सामान्य मानव के लिए तो स्वाभाविक या सामान्य सी बात ही लगती है।

तप, स्वाध्याय, ईश्वरप्रणिधान सहित अष्टांग योग के मार्ग को जानते और मानते हुए भी काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य रूपी षड्रिपुओं से ग्रस्त हो इनके परिणामी मार्ग पर चलना भी पशुता से अभिन्न मनुष्यों के लिए यदि स्वाभाविक या सामान्य ना होता, तो श्रेय मार्ग पर चलने वालों की कमी ना होती।

मानवता और देवत्व की भी प्राप्ति कराने वाले वाले गुणों की परस्परतंत्रता और दानवता प्राप्त कराने वाले अवगुणों की भी परस्परतंत्रता इतनी सुदृढ़ है कि एक के विचलित या खंडित होने पर अन्य गुण या अवगुण भी विचलितया खंडित हो जाते हैं। यथा धर्म के प्रथम लक्षण धैर्य के खंडित होने पर क्या शेष नौ लक्षण तथा परम लक्षण अहिंसा अखंडित रह सकते हैं? यही बात अन्य लक्षणों को लेकर भी परीक्षित की जा सकती है। ऐसे ही पतन के मार्ग के जो कारक है, बे भी अंतर्गुंथित है और उनमें भी एक का आश्रय लेने से पतन के अन्य कारक स्वतः प्राप्त होते हैं। अर्थात आप पतन के मार्ग के एक कारक को धारण करते हैं तो भोश कारक आपसे स्वतः लिपटकर पतन का मार्ग और प्रशस्त करते हैं।

पतन के मार्ग का ऐसा ही एक कारक है—"पक्षपात" जिसको अपनाने से उदात्त गुण स्वतः लुप्त होते जाते हैं और अनुदात्तता की गहनता बढ़ती चली जाती है। व्यक्ति, समाज और जगत दूषित होता चला जाता है।

इस पक्षपात के कारण ही तो माता—पिता, दादा—दादी लड़कों को कन्या की अपेक्षा अधिक खिलाते—पिलाते, पढ़ाते और दुलारते हैं; इस पक्षपात के कारण ही तो अध्यापक अपने पुत्रों, स्वजनों और पैसे देकर घर पर पढ़ने आने वाले विद्यार्थियों को अधिक अंक देते हैं; इस पक्षपात के कारण ही तो चिकित्सक अपने जान पहचान वालों और पैसे देने वालों की चिकित्सा शीघ्र और लगन से करते हैं; इस पक्षपात के कारण ही तो चयनकर्ता चहेते खिलाड़ियों का चयन करते हैं।

पक्षपात करने के लिए न्यायाधीशों के घर धन पहुंचाने के मामले भी सामने आते हैं, पीड़ित हार जाता है और अपराधी विजयी होता है। पक्षपात के कारण ही तो दान या राहत सामग्री या वसूली में छूट वाले ऋणों का वितरण अपनों को ही किया जाता है। जरूरत देखकर नहीं, पक्षपात के कारण रोजगार भी अपनों को दिए जाते हैं; आवास वितरण अपनों को किए जाते हैं। इस पक्षपात के कारण ही तो दुराचारी, भ्रष्टाचारी, मानवता को बाँट, देश को बेचने वालों को सुरक्षा मिलती है और असुरक्षित जनता असुरक्षित मरती है।

समाज की इकाई मनुष्य के व्यक्तित्व में घर कर चुका पक्षपात सभाओं और व्यवस्था में भी परिलक्षित होने लगता है। इसका परिणाम वर्ग विशेष का तुष्टिकरण व सर्वहितकारी नियम या व्यवस्था लागू करने में प्रमाद के रूप में सामने आता है।

मानवता के ह्रास का **चरम तब** सम्मुख आता है, जब पक्षपात से ग्रसित होकर भ्रष्ट बुद्धि हुआ निष्ट मनुष्य इस सृष्टि के कर्ता, धर्ता और संहर्ता को अपने पक्षपात में समाहित करने की धृष्टता सफलतापूर्वक कर लेता है।

'मुंडे मुंडे मतिर्भिन्ना' के अनुसार परमात्म प्राप्ति के कई मार्ग हो सकते हैं। इसका वास्तविक स्वरूप यूँ समझना चाहिए कि मानव शरीरधारियों को मनुष्यत्व और देवत्व की ओर ले जाने वाले उदात्त कारकोंमें से किसी भी एक उदात्त कारक को विशेष रूप से एंक मनुष्य द्वारा तथा दूसरे उदात्त कारक को दूसरे मनुष्य द्वारा धारण कर लेना ही मार्ग भिन्नता है। जैसे कोई इतना धैर्यवान् हो जाए कि कोई उसे धैर्य से डिगा ना सके; कोई अन्य इतना क्षमाशील हो जाए की प्राण लेने वाले को भी दयानंद की भाँति क्षमा कर दे; तीसरा कोई सपरिवार भूखा मर जाए किंतु अस्तेय से विचलित ना हो, कोई चौथा इंद्रिय निग्रह सिद्ध करके सांसारिक मोह को और लौकिक ऐषणाओं से आष्ट ना होता हुआ नैष्ठिक ब्रह्मचर्य का पालन करे; पाँचवाँ कोई तपस्यापूर्ण जीवन अपनाये, तो कोई छठा ईश्वरप्रणिधान को ही जीवन बना ले। मात्र एक एक उदात्त गुण पर दृढ़ और अविचलित रहने वाले ऐसे महानुभावों में शेष उदात्त कारक स्वतःपरिलक्षित होते हैं, उनका अभाव नहीं होता।

'मतिर्भिन्ना' का तात्पर्य यह नहीं कि बिना किसी तर्क, युक्ति या प्रमाण के आप एक सत्य के लिए दो विपरीत धारणाएं कर लें। यथा कोई परमदयालु भी मोक्ष पा ले और कोई क्रूर हत्यारा भी। यथा ईश्वर जड़ भी है और चेतन भी।

विश्व को मार्ग दिखाने वाले आर्यावर्त्त में हजारों ऐसी विपरीत धाराएँ **'मुंडे मुंडे मतिर्भिन्ना'** के नाम पर चली कि आर्यावर्त में ही नहीं, पूरे विश्व में अंधकार व्याप्त हो गया। आरंभ में विपरीत धाराओं में या मत मतान्तरों में अपने उद्धार की बातें थी, दूसरों के पतन या हानि करने की बात नहीं थी। इनमें श्रेष्ठता का निर्णय वार्त्ता, वाद या शास्त्रार्थ के माध्यम से होता था और सत्य को स्वीकार करने में भी से बहुत लोग तत्पर रहते थे। पश्चात् मतों में राज्य का आश्रय लेकर अपने मत का प्रसार करने और प्रतिद्वंद्वियों को पददलित करने की प्रवृत्तियाँ जन्म लेने लगी, तो राजमत के साथ जनमत बदलने लगा। पक्षपात का कोप यही नहीं रुका। अल्पज्ञ और अल्पक्षम मनुष्य ने पक्षपात कर विश्व को संकटमय बना दिया– यहाँ तक भी ठीक था। लेकिन अब इसकी हिमाकत देखिए कि अपने भी और संपूर्ण जगत के रचयिता परमात्मा को इसने पक्षपाती बताना और बनाना आरंभ कर दिया तथा उसके नाम से अधिकाधिक दुर्व्यवहार करने लगा।

अरब से उठे दो मतवालों ने तो परमात्मा के नाम से विरोधी या विपरीत मत सम्प्रदायों को मानने वालों का विनाश करना आरंभ कर दिया। इन मतों के उदय के बाद तो जगत साक्षात् नर्क बन गया और जितना इन मतों का प्रचार अधिक हो रहा है, उतना ही घोर नरक यह विश्व बनता जा रहा है। क्योंकि ये मत परमात्मा को पक्षपाती बताते हुए उसके नाम से अपनी कुत्सित

भावनाओं, ऐषणाओं और वासनाओं को संतुष्ट करते हैं और जगत में उदात्त भावनाओं, सिद्धांतों और कर्मों का अंत सुनिश्चित करते हैं। इनके उदयोपरांत अकारण आक्रमण, हत्या, लूट, अपहरण, बलात्कार, दास प्रथा, जबरन इस्लामीकरण, मांसाहार, मद्यपान, छलकपट, धोखा, असहिष्णुता, संकीर्णता आदि ही मानो विश्व को व्याप्त कर रही हैं।

ऐसे घिनौने कार्य परमात्मा के नाम पर किए जाने का कोई विरोध भी करता है तो उसे ईशनिंदा के अपराध में मृत्युदंड दे दिया जाता है। अर्थात् उदात्तता के संपूर्ण मार्ग बंद किए जाते हैं। सारा विश्व ऐसे आतंकवाद से पीड़ित है।

अब रही राज्यव्यवस्था! महत्व की बात,एक व्यवस्था जो किसी राष्ट्र या राज्य के नागरिकों के लिए हितकर हो, वह व्यवस्था दूसरे राष्ट्रों एवं राज्यों के लिए अहितकर कैसे हो सकती है? अर्थात् जो श्रेष्ठ राज्य व्यवस्था है, वह सर्वत्र लागू हो जानी चाहिए। किंतु ऐसा नहीं होता! इस संबंध में मत भिन्नता समाप्त नहीं होती। सभी या विभिन्न राजनैतिक सिद्धान्तों में कमियां अवश्य है और अच्छाइयां भी; ठीक वैसे ही जैसे कि धर्म के मामले में हैं। किंतु किसी भी क्षेत्र में मतभिन्नता को त्यागने में अर्थात् अपने मत की कमियों को त्यागने हेतु कोई तैयार नहीं होता है। क्योंकि इससे उनका पक्ष कमजोर हो जाता है और वे पक्षपात छोड़ नहीं सकते। अपने अपने पक्ष को, बिना उसके सत्य और हितकारी होने का सुनिश्चिय किए, उसके प्रति अंधश्रद्धा और हठधर्मिता से पक्षपाती होकर दूसरे के मतों के अधिक हितकारी बातों को दृष्टि में भी ना लाकर अन्य मतों के विरोध स्वरूप तर्क नहीं, युक्ति नहीं, प्रमाण नही, वरन्पाशविक बल और हिंसा का मार्ग अपनाने वाले लोग विश्व को साक्षात नरक बनाए हुए हैं, जिससे व्यक्तिगत, पारिवारिक, समूहगत, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, शैक्षिक इत्यादि सभी क्षेत्रों में पक्षपात और पक्षपात के कारण गिरती मानवता ही दृष्टिगत होती है।

ऐसा नहीं है कि अकेला 'पक्षपात' ही दुनिया को नर्क बनाए हुए हैं, बल्कि सारे अवनतिगामी कारक भी इसमें सम्मिलित है।

चिंतनीय यह है कि मानव एवं मानवता को उदात्त बनाने वाले कारणों को जानने, मानने और क्रियान्वित करने में कठिनाई इसी एक कारण पक्षपात से प्रमुखतः आती है कि मनुष्य मिथ्या होने पर भी अपना पक्ष छोड़ना नहीं चाहता!

हाँ! उसके पक्षपाती होने के लिए बहुत से अन्य कारक और कारण हो सकते हैं, किंतु पक्षपात के चलते वह सत्य को स्वीकार नहीं करता और धर्म तो सत्य के ही आश्रित है, इसलिए धर्म का राज हो नहीं सकता।

जब व्यक्ति से लेकर राष्ट्र तक पक्षपात से सने हुए, दुनिया को घोर अंधकारमय नरक बनाए हुए, वस्तुतः अपना भी और परायों का तो निश्चित रूप में अहित करने में संलग्न है। कोई भी इस अहित के परिणाम और इसकी निरंतरता देखने को तैयार नहीं है!लोगों में स्थायी निराशा घर कर रही है।

ऐसे विकट समय में एक व्यक्ति पक्षपात रूपी अंधकार के निकृश्टतम कारण पक्षपात पर तीक्ष्ण कुठार से प्रहार करता हुआ, निशपक्षता के प्रकाश को फैलाता, जगत को प्रकाशित करता, दिखाई देता है।

घनघोर गर्जना करता हुआ वह कभी पक्षपात को परिभाषित करता है, कभी उसका स्वरूप दिखाता है, कभी इससे होने वाली हानियाँ बताता है, कभी इसे छोड़ने का आव्हान करता है, कभी इसके कारण जिस नरक में लोग पड़े हुए हैं– उसका वृतांत बताता मानो कहता है –देखो! आंखें खोल कर देखो! विचार करके देखो, कि इस पक्षपात ने, जो कि तुम अपने स्वार्थ के बचाव और वासनाओं की पूर्ति के लिए करते हो– उससे तुम्हारी अपनी संतान और भावी पीढ़ियाँ भी सुखी होने वाली नहीं है। तुम्हें मार्ग दिखाने वाले तुम्हारे आदर्शों और अग्रजों ने भी इसी मार्ग का अनुसरण अज्ञानवश स्वार्थ, ऐशणाओं और वासनाओं की पूर्ति के लिए किया था, उसी कारण से आज तुम इस नरक में हो। जागिए!

उस दिव्य पुरुष की वाणी पुकार रही हैं–

"जो मनुष्य पक्षपाती होता है, वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मतवाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है, इसलिए वह सत्य मत को प्राप्त नहीं हो सकता।"

इस चेतावनी से जागृत लोगों को मुक्ति का उपाय बताते फिर कहते हैं–

"आजकल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मतों में हैं, वे पक्षपात छोड़ सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो–जो बातें सब के अनुकूल सब में सत्य हैं, उनका ग्रहण और जो एक दूसरे से विरुद्ध बातें हैं, उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्त्तें वर्त्तावें तो जगत् का पूर्ण हित होवे।"

ऐसा नहीं है कि वह दिव्य पुरुष अन्य मत वालों की तरह पराए मत वालों को ही बदलने का कह रहा है, वरन् सबसे पहले जो मत उसके अग्रजों ने उसके परिवेश में स्थापित किये, सबसे पहले कुठार उन्हीं मतमतान्तरों के पक्षपात पर चला रहा है। ऐसी ही निशपक्षता बरतने का सभी को आह्वान ये आर्य महापुरुष करते हैं: –

"यद्यपि मैं आर्यावर्त्त देश में उत्पन्न हुआ और वसता हूँ, तथापि जैसे इस देश के मतमतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न कर याथातथ्य प्रकाश करता हूँ, वैसे ही दूसरे देशस्थ वा मत वालों के साथ भी वर्त्तता हूँ। जैसा स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषय में वर्त्तता हूँ, वैसा विदेशियों के साथ भी तथा सब सज्जनों को भी वर्त्तना योग्य है। क्योंकि मैं भी जो किसी एक का पक्षपाती होता तो जैसे आजकल के स्वमत की स्तुति, मण्डन और प्रचार करते और दूसरे मत की निन्दा, हानि और बन्ध करने में तत्पर होते हैं, वैसे मैं भी होता, परन्तु ऐसी बातें मनुष्यपन से बाहर हैं। क्योंकि जैसे पशु बलवान् हो कर निर्बलों को दुःख देते और मार भी डालते हैं, जब मनुष्य शरीर पाके वैसा ही कर्म करते हैं तो वे मनुष्य स्वभावयुक्त नहीं, किन्तु पशुवत् हैं। और जो बलवान् होकर निर्बलों की रक्षा करता है वही मनुष्य कहाता है और जो स्वार्थवश होकर परहानिमात्र करता रहता है, वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है।

जैसे मैं अपना वा दूसरे मतमतान्तरों का दोष पक्षपात रहित होकर प्रकाशित करता हूँ। इसी प्रकार यदि सब विद्वान् लोग करें तो क्या कठिनता है कि परस्पर का विरोध छूट, मेल होकर आनन्द में एकमत होके सत्य की प्राप्ति सिद्ध हो।

यदि मैं पक्षपात करता तो आर्य्यावर्त्त में प्रचरित मतों में से किसी एक मत का आग्रही होता। किन्तु जो–जो आर्य्यावर्त्त वा अन्य देशों में अधर्मयुक्त चाल चलन है उस का स्वीकार और जो धर्मयुक्त बातें हैं उन का त्याग नहीं करता, न करना चाहता हूँ क्योंकि ऐसा करना मनुष्यधर्म से बहिः है।"

इन दिव्यष्टि महापुरुषने देवत्त्वप्राप्ति हेतु मानव तन प्राप्त करने वालों के पशुत्त्व की ओर अग्रसर होने के प्रमुख कारण पक्षपात पर ही प्रहार नहीं किया, वरन् पतन के सभी कारकों पर प्रहार करते और उन्नति के सभी कारकों का बखान करते अपने मन्तव्य को एक ग्रंथरूप में विश्व के समक्ष प्रस्तुत कियां हैं। इस ग्रंथ के बारे में भी पक्षपात छोड़कर पढ़ने का आव्हान करते वे लिखते हैं–

"यद्यपि इस ग्रन्थ को देखकर अविद्वान् लोग अन्यथा ही विचारेंगे, तथापि बुद्धिमान् लोग यथा योग्य इस का अभिप्राय समझेंगे, इसलिये मैं अपने परिश्रम को सफल समझता और अपना अभिप्राय सब सज्जनों के सामने धरता हूँ। इस को देख–दिखला के मेरे श्रम को सफल करें। और इसी प्रकार पक्षपात न करके सत्यार्थ का प्रकाश करके मुझ वा सब महाशयों का मुख्य कर्त्तव्य काम है।"

धर्म ही मनुष्य को पशुओं से पृथक कर उसे देवत्व की ओर बढ़ाता है। धर्म में निश्पक्ष होने का महत्व बताते हुए वे कहते हैं–

"जो पक्षपातरहित न्याय, सत्य का ग्रहण, असत्य का सर्वथा परित्यागरूप आचार है उसी का नाम धर्म और इस से विपरीत जो पक्षपात सहित अन्यायाचरण सत्य का त्याग और असत्य का ग्रहण रूप कर्म है उसी को अधर्म कहते हैं।"

परमात्मा को भी पक्षपाती घोषित करने वाले स्वमत के दूषकों को लताड़ते वे दिव्यपुरुष पूछते भी हैं और भ्रमभंजन करते स्पष्ट भी करते हैं–

"क्या ईश्वर पक्षपाती है कि वेदों के पढ़ने सुनने का शूद्रों के लिये निषेध और द्विजों के लिये विधि करे? जो परमेश्वर का अभिप्राय शूद्रादि के पढ़ाने सुनाने का न होता तो इनके शरीर में वाक् और श्रोत्र इन्द्रिय क्यों रचता? जैसे परमात्मा ने पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र, सूर्य और अन्नादि पदार्थ सब के लिये बनाये हैं वैसे ही वेद भी सबके लिये प्रकाशित किये हैं। और जहाँ–जहाँ निषेध किया है उस का यह अभिप्राय है कि जिस को पढ़ने पढ़ाने से कुछ भी न आवे वह निर्बुद्धि और मूर्ख होने से शूद्र कहाता है।"

"जो दुष्ट कर्मकारी द्विज को श्रेष्ठ और श्रेष्ठ कर्मकारी शूद्र को नीच मानें तो इस से परे पक्षपात, अन्याय, अधर्म दूसरा अधिक क्या होगा?"

"धर्म तो पक्षपातरहित न्यायाचरण, सत्य का ग्रहण, असत्य का परित्याग, वेदोक्त ईश्वर की आज्ञा का पालन, परोपकार, सत्यभाषणादि लक्षण सब आश्रमियों का अर्थात् सब मनुष्यमात्र का एक ही है...."

सभी मत मतांतरों में स्वमत का प्रचार करने के लिए सांसारिकता से विमुख होकर लोग अपनी संपूर्ण ऊर्जा, समय और सामर्थ्य अपने मत का प्रचार करने में लगाते हैं। ये लोग अपने मत के सन्यासी होते हैं जो सन्यासी, साधु, पादरी इत्यादि के रूप में जाने जाते हैं। ये लोग

संसार से विरक्त होने के कारण निर्भय होकर सत्य को सामने ला सकते हैं। ऐसे लोगों को कर्तव्य का भान कराने हेतु इस धरा पर मनुष्य जाति की उन्नति के शिखरकाल के मार्गदर्शक महर्षि मनु को उद्धृत करते वे कहते हैं: –

"दूषितोऽपि चरेद्धर्मं यत्र तत्राश्रमे रतः।
समः सर्वेषु भूतेषु न लिंगं धर्मकारणम्।।६।।

कोई संसार में उसको दूषित वा भूषित करे तो भी जिस किसी आश्रम में वर्त्तता हुआ पुरुष अर्थात् संन्यासी सब प्राणियों में पक्षपातरहित होकर स्वयं धर्मात्मा और अन्यों को धर्मात्मा करने में प्रयत्न किया करे। और यह अपने मन में निश्चित जाने कि दण्ड, कमण्डलु और काशायवस्त्र आदि चिह्न धारण धर्म का कारण नहीं है। सब मनुष्यादि प्राणियों की सत्योपदेश और विद्यादान से उन्नति करना संन्यासी का मुख्य कर्म है।।६।।

पक्षपात छोड़ कर वर्त्तना दूसरे आश्रमों को दुष्कर है। जैसा संन्यासी सर्वतोमुक्त होकर जगत् का उपकार करता है, वैसा अन्य आश्रमी नहीं कर सकता। क्योंकि संन्यासी को सत्यविद्या से पदार्थों के विज्ञान की उन्नति का जितना अवकाश मिलता है, उतना अन्य आश्रमी को नहीं मिल सकता। परन्तु जो ब्रह्मचर्य से संन्यासी होकर जगत् को सत्यशिक्षा करके जितनी उन्नति कर सकता है उतनी गृहस्थ वा वानप्रस्थ आश्रम करके संन्यासाश्रमी नहीं कर सकता।"

मानवता को गारत करने वाले मतों ने अपने प्रसार के लिए राज्यश्रय भी लिया है। राजा नहीं, तो राजपुरुषों का भी उपयोग किया है। ऐसे मतवाले हीनकर्मा राजपुरुषों के प्रति राजा और राजसभा को सावधान करने के लिए भी वे महर्षि मनु को उद्धृत करते हैं: –

ये कार्यिकेभ्योऽर्थमेव गृह्णीयुः पापचेतसः।
तेषां सर्वस्वमादाय राजा कुर्यात्प्रवासनम्।।मनु०।।

जो राजपुरुष अन्याय से वादी प्रतिवादी से गुप्त धन लेके पक्षपात से अन्याय करे उन का सर्वस्वहरण करके यथायोग्य दण्ड देकर ऐसे देश में रक्खे कि जहाँ से पुनः लौटकर न आ सके क्योंकि यदि उस को दण्ड न दिया जाय तो उस को देख के अन्य राजपुरुष भी ऐसे दुष्ट काम करें और दण्ड दिया जाय तो बचे रहें।।

जब राजसभा में पक्षपात से अन्याय किया जाता है वहाँ अधर्म के चार विभाग हो जाते हैं। उनमें एक अधर्म के कर्त्ता, दूसरा साक्षी, तीसरा सभासदों और चौथा पाद अधर्मी सभा के सभापति राजा को प्राप्त होता है।

चाहे पिता, आचार्य, मित्र, माता, स्त्री, पुत्र और पुरोहित क्यों न हो जो स्वधर्म में स्थित नहीं रहता वह राजा का अदण्ड्य नहीं होता अर्थात् जब राजा न्यायासन पर बैठ न्याय करे तब किसी का पक्षपात न करे किन्तु यथोचित दण्ड देवे।"

पक्षपाती लोगों की सत्य के स्वीकार करने में दयनीय असमर्थता को उद्‌घाटित करते वे कहते हैं–

"कभी असत् का भाव वर्त्तमान और सत् का भाव अवर्त्तमान नहीं होता। इन दोनों का

निर्णय तत्त्वदर्शी लोगों ने जाना है। अन्य पक्षपाती आग्रही मलीनात्मा अविद्वान् लोग इस बात को सहज में कैसे जान सकते हैं?"

सभी मतवाले अपने मत का चरम उद्देश्य अपने आराध्य अर्थात् जगत के कर्ता–धर्ता, भर्त्ता, संहर्त्ता को प्राप्त कर जन्म मरण और सांसारिक दुखों से मुक्त हो, परम आनंद की प्राप्ति करना ही बताते हैं। किंतु मुक्ति के मार्ग में पक्षपात कितना बाधक है, इसे बताते हुए महर्षि लिखते हैं: –

"(प्रश्न) मुक्ति और बन्ध किन–किन बातों से होता है?

(उत्तर) परमेश्वर की आज्ञा पालने, अधर्म्म, अविद्या, कुसंग, कुसंस्कार, बुरे व्यसनों से अलग रहने और सत्यभाषण, परोपकार, विद्या, पक्षपातरहित न्याय, धर्म की वृद्धि करने, पूर्वोक्त प्रकार से परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना अर्थात् योगाभ्यास करने, विद्या पढ़ने, पढ़ाने और धर्म से पुरुषार्थ कर ज्ञान की उन्नति करने, सब से उत्तम साधनों को करने और जो कुछ करे वह सब पक्षपातरहित न्यायधर्मानुसार ही करे। इत्यादि साधनों से मुक्ति और इन से विपरीत ईश्वराज्ञाभंग करने आदि काम से बन्ध होता है।"

चौदह समुल्लास वाले अपने ग्रंथ के अनुशीलन का लाभ भी पक्षपात छोड़ने पर होना बताते हुए वे लिखते हैं: –

"इन चौदह समुल्लासों को पक्षपात छोड़ न्यायष्टि से जो देखेगा उस के आत्मा में सत्य अर्थ का प्रकाश होकर आनन्द होगा। और जो हठ, दुराग्रह और ईर्ष्या से देखे सुनेगा उस को इस ग्रन्थ का अभिप्राय यथार्थ विदित होना बहुत कठिन है।"

इसी अमर ग्रंथ में दुनिया को नर्क बनाने वालेचार मतों की समीक्षा करते हुए पक्षपात शब्द का अधिकतम प्रयोग इनके विरुद्ध कर पक्षपात की हानियां बताई। इनचार मतों में पुराणी में भारत के सभी मतमतांतर आ जाते हैं। जैनी के साथ बौद्ध समाहित है। परमात्मा को भी घोर पक्षपाती बताते हुए उसके नाम पर सभी अपराध जायज ठहराने वाले ईसाई और इस्लाम मातों की अपूर्व समीक्षा करते हुए इन मतावलंबियों का भी वे आह्वान करते लिखते हैं: –

"चार मत अर्थात् जो वेद–विरुद्ध पुराणी, जैनी, किरानी और कुरानी..... में जैसी मेरी बुद्धि, जितनी विद्या और जितना इन चारों मतों के मूल ग्रन्थ देखने से बोध हुआ है उस को सब के आगे निवेदित कर देना मैंने उत्तम समझा है क्योंकि विज्ञान गुप्त हुए का पुनर्मिलना सहज नहीं है। पक्षपात छोड़कर इस को देखने से सत्याऽसत्य मत सब को विदित हो जायेगा। पश्चात् सब को अपनी–अपनी समझ के अनुसार सत्यमत का ग्रहण करना और असत्य मत को छोड़ना सहज होगा।"

मानवता को पतन के मार्ग पर धकेल कर दुनिया को बूचड़खाना बना देने वाले ये मत सिर्फ अपने मतावलंबियों के प्रति परमात्मा को दयालु और क्षमाशील बताते हैं। ऐसी छद्मदया, छद्मन्याय और छद्मक्षमाशीलता पर प्रहार करते हुए ये दिव्यपुरुष लिखते हैं –

"यद्यपि दया और क्षमा अच्छी वस्तु है तथापि पक्षपात में फँसने से दया अदया और क्षमा अक्षमा हो जाती है। इस का प्रयोजन यह है कि किसी भी जीव को दुःख न देना यह बात सर्वथा सम्भव नहीं हो सकती क्योंकि दुष्टों को दण्ड देना भी दया में गणनीय है। जो एक दुष्ट को दण्ड

न दिया जाय तो सहस्रों मनुष्यों को दुःख प्राप्त हो, इसलिये वह दया अदया और क्षमा अक्षमा हो जाय !"

पक्षपात के निरर्थक और घातक परिणाम को दर्शाते वे लिखते हैं: –

"पक्षपात से क्या–क्या अनर्थ जगत् में न हुए और न होते हैं। सच तो यह है कि इस अनिश्चित क्षणभंगुर जीवन में पराई हानि करके लाभ से स्वयं रिक्त रहना और अन्य को रखना मनुष्यपन से बहिः है।"

इसमें प्रयुक्त "रिक्त" शब्द अत्यधिक विचार करने योग्य है।

सभी मतावलंबी यही दावा करते हैं कि उनका मार्ग सीधा है, वे धर्म पर चलने वाले हैं। सत्ताएँ भी धर्म को मानकर व्यवहार करती हैं। सभी धर्मावलंबियों, धार्मिक राजा और प्रजा को सुपरिभाशित करते ये महापुरुष लिखते हैं' –

"सीधा मार्ग वही होता है जिस में सत्य मानना, सत्य बोलना, सत्य करंना, पक्षपात रहित न्याय धर्म्म का आचरण करना आदि हैं और इन से विपरीत का त्याग करना।

जो पक्षपातरहित, न्यायाचरण सत्यभाषणादि युक्त ईश्वराज्ञा, वेदों से अविरुद्ध है उस को 'धर्म' और जो पक्षपातसहित अन्यायाचरण मिथ्याभाषणादि ईश्वराज्ञाभंग, वेदविरुद्ध है उस को 'अधर्म' मानता हूँ।

'राजा' उसी को कहते हैं जो शुभ गुण, कर्म, स्वभाव से प्रकाशमान, पक्षपातरहित न्यायधर्म का सेवी, प्रजाओं में पितृवत् वर्त्ते और उन को पुत्रवत् मान के उन की उन्नति और सुख बढ़ाने में सदा यत्न किया करे।

'प्रजा' उस को कहते हैं कि जो पवित्र गुण, कर्म, स्वभाव को धारण कर के पक्षपातरहित न्याय धर्म के सेवन से राजा और प्रजा की उन्नति चाहती हुई राजविद्रोहरहित राजा के साथ पुत्रवत् वर्त्ते।"

संसार को असार ही नहीं नरक बना देने वाले पक्षपात, जिसपर विश्व के किसी चिंतक ने इतना विचार नहीं किया होगा, जितना करके इसके विरुद्ध स्वयं निष्पक्ष हो खड़े हो जाने वाले विश्व के ये एकमात्र योद्धा और कोई नहीं, व्याकरणसूर्य वेद और आर्षग्रन्थों के उपकारदृष्टा दण्डी स्वामी विरजानन्द जी महाराज के पट्ट शिष्य आर्यसमाज के संस्थापक एकस्मिन्नेव सर्वे **महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज** है और जो उद्धरण इस लेख में दिए हैं, वे उनके अमर ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश से दिए है।

जीवन में कुछ करना है तो महर्षि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश सहित अन्य ग्रंथ और उनकी जीवनी अवश्य पढ़ें।

– कमल

आर्यसमाज का इतिहास

अध्याय–५

-पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति

1. संन्यासी तथा प्रचारक

इस युग के प्रचारकों में से स्वामी ईश्वरानन्द जी और पं. लेखराम जी की चर्चा पहले हो चुकी है। उनके पश्चात् ब्रह्मचारी नित्यानन्द जी (जो पीछे स्वामी नित्यानन्द जी कहलाये) और स्वामी विश्वेश्वरानन्द जी के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ब्र. नित्यानन्द जी का जन्म जोधपुर रियासत के जालोर नामक गांव में हुआ था। उन्होंने संन्यास लेकर स्वामी विश्वेश्वरानन्द जी को अपना गुरु धारण किया। ये दोनों ही विद्वान् संन्यासी एकाग्रचित होकर आर्यसमाज के प्रचार कार्य में लग गये और जीवन भर इसी कार्य में लगे रहे। इनका प्रचार कार्य देशभर में व्याप्त था। जहाँ आवश्यकता होती थी वहीं पहुँच जाते थे। पंजाब, पश्चिमोत्तर प्रदेश और राजपूताना इनके विशेष कार्यक्षेत्र थे। स्वामी नित्यानन्द जी का बूंदी का शास्त्रार्थ प्रसिद्ध है जिसमें उन्हेंाने अद्वैतवाद के समर्थक वेदान्तियों की शंकाओं का समाधान किया था। विरोधी लोग इनकी युक्तियों से इतने घबराये कि उन्हें रियासत के बाहर निकालने के लिए राजा का द्वार खटखटाना पड़ा।

धीरे-धीरे स्वामी नित्यानन्द जी की विद्वत्ता की धाक देश भर में जम गई। स्वामी विश्वेश्वरानन्द जी और उनकी ओर से प्रकाशित "पुरुषार्थ प्रकाश" नाम की पुस्तक ने आर्यजगत् में बहुत प्रतिष्ठा प्राप्त की। रियासतों के शासकों में आपका विशेष सम्मान हुआ। इन्दौर, बड़ौदा, उदयपुर, मैसूर आदि रियासतों के शासक स्वामी नित्यानन्द जी को गुरु के समान मानते थे। मैसूर नरेश पर आपके उपदेशें का इतना प्रभाव हुआ कि उन्होंने विधिपूर्वक वैदिक धर्म को स्वीकार करके वैदिक धर्म वर्द्धिनी सभा का प्रधान बनना भी अंगीकार कर लिया।

आपने काश्मीर में कई दिनों तक वैदिक धर्म पर व्याख्यान दिए। इनका उस समय के काश्मीर नरेश पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे काश्मीर के मुसलमानों को आर्यधर्म में वापिस लेने के लिए तैयार हो गये परन्तु काशी के पण्डितों ने शुद्धि के विरूद्ध व्यवस्था दे दी, जिससे देश की एक बड़ी समस्या हल होते-होते रह गई। स्वामी जी बहुत ही उद्‌भट् विद्वान् होने के साथ ही प्रभावशाली वक्ता भी थे। आगे चलकर उन्होंने वेद सम्बन्स्धी अनुसन्धान का कार्य का जो बीजारोप किया वह अब होशियारपुर में 'वैदिक अनुसन्धान' के केन्द्र के रूप में फलफूल रहा है।

पं. कृपाराम जी जो पीछे से स्वामी दर्शनानन्द जी के नाम से प्रख्यात हुए, इसी युग में प्रचार क्षेत्र में उतरे। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा अरबी, फारसी में हुई थी। हिन्दी और संस्कृत का अभ्यास उन्होंने स्वयं किया। छोटी उम्र से ही इनकी प्रवृत्ति वैराग्य और धार्मिक कामों की ओर थी। इनके पिता ने इन्हें एक दुकान

खोल दी थी, जिसका नाम इन्होंने '**सच्ची दुकान**' रखा। सच्चे व्यवहार से दुकान को लाभ तो हुआ परन्तु कृपाराम जी का धार्मिक जोश उन्हें काशी घसीट ले गया जहाँ उन्होंने व्याकरण और दर्शन का अध्ययन किया। उसके पश्चात् आप आर्यसमाज के प्रचार में लग गये। लेख द्वारा पचार करने की धुन में एक प्रेस चलाया। 'तिमिर नाशक' नाम का एक पत्र भी निकाला और पुस्तकें तो अनेक प्रकाशित कीं। इन सब कार्यों में आपने हजारों रूपयों की हानि उठाई, परंतु धर्म की ऐसी धुन थी कि कभी आर्थिक हानि की चिन्ता न की। उस युग के प्रचारकों में जोश और तर्क शक्ति की दृष्टि से आपका स्थान बहुत ऊँचा था।

इस युग के आर्य विद्वानों में पं. गणपति शर्मा का नाम विशेष रूप से स्मरणीय है। आप बीकानेर राज्य के चूरू नामक स्थान के रहने वाले थे। आपने काशी में विद्याध्ययन किया। आप उद्‌भट् विद्वान् और कुशल वक्ता थे। शास्त्रीय विषयों की व्याख्या और शास्त्रार्थों में आपका लोहा विपक्षियों ने भी मान लिया था। आप स्त्री-शिक्षा के प्रबल पक्षपाती और परदा सिस्टम के घोर विरोधी थे।

पं. आर्यमुनि जी ने वैदिक साहित्य को सर्वसाधारण तक पहुंचाने में बहुत ही असाधारण सफलता प्राप्त की थी। आपने सभी दर्शनों और उपनिषदों के हिन्दी भाष्य करके हिन्दी जानने वालों को भारतीय साहित्य का आनन्द लेने और उससे परिचित होने का अवसर दिया था। आपके इस साहित्यिक कार्य का आर्यजगत् में तो आदर हुआ ही, उस समय के सरकार ने भी उसे बहुत आदरणीय समझा और पंडित जी को महामहोपाध्याय की पदवी से सुभूषित किया।

प्रारम्भ से ही आर्यसमाज के प्रचारकों में संगीत द्वारा प्रचार करने वालों का विशेष स्थान रहा है। यों तो उस युग में धार्मिक संगीत और प्रचार, दोनों ही केवल गायकों तथा प्रचारकों तक परिमित नहीं थे। प्राय: सभी आर्य नर-नारी ऋषि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों का अध्ययन करते थे और प्रार्थना मन्त्रों के अतिरिक्त अन्य उपदेशात्मक भजनों को याद करना अपना कर्त्तव्य समझते थे। यही कारण था कि उस समय साप्ताहिक सत्संगों और वार्षिकोत्सवों पर उतने उपदेशकों और संगीत शास्त्रियों के उपदेश और भजन नहीं होते थे कि जितने आर्यसमाज के साधारण सभासदों के। ईश्वर-भक्ति के भजन गाने के लिए उस समय के आर्यसमाजों के भजनीकों का मुंह नहीं देखना पड़ता था। मेरठ के नवें वार्षिकोत्सवों का जो वृत्तान्त हमने इस अध्याय के आरम्भ में दिया है उससे पता चलता है कि उत्सव पर संगीत का खाना पूरा करने के लिए किसी भजनीक की आवश्यकता नहीं पड़ी। आर्यसभासदों ने स्वयं ही यह कार्य पूरा कर लिया।

परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि उस युग में संगीत द्वारा आर्यसमाज की सेवा करने वालों का सर्वथा अभाव था। सभी प्रान्तों में कुछ ऐसे सज्जन विद्यमान थे जो अपनी कवित्व शक्ति और गानशक्ति द्वारा आर्यसमाज की सेवा करते थे। पंजाब में भक्त अमीचन्द अपने भक्तिपूर्ण भजनों और मधुर कंठ से, चौधरी नवलसिंह ओजस्वी संगीत और सिंह गर्जना से तथा माई भगवती उपदेशात्मक और घरेलू गानों द्वारा आर्यसमाज की सेवा करने में संलग्न थे।

इस अध्याय में आर्यसमाज लाहौर के एक वार्षिकोत्सव का संक्षिप्त विवरण देकर समाप्त करूंगा। उससे आर्यसमाज की उस युग की प्रवृत्तियों और बढ़ती हुई लोकप्रियता का आभास मिलेगा। सन् 1899 में आर्यसमाज लाहोर के वार्षिकोत्सव का महत्त्व केवल पंजाब तक ही परिमित न था वह उससे बहुत आगे बढ़ गया था। उत्सव नगर कीर्तन से आरम्भ हुआ। उसमें पंजाब और उत्तर प्रदेश की अनेक भजन-मण्डलियों ने भाग लिया। सिकन्दराबाद की भजन मंडली की धूम रही। उसके चारों ओर जनता की असाधारण भीड़ रहती थी। पंजाब निवासियों के लिए उस भजन मंडली के खड़ताल के साथ गाये हुए भजन बहुत ही आकर्षक सिद्ध हुए।

25 नवम्बर को प्रात: आर्यसमाज मन्दिर में उत्सव आरम्भ हुआ। नर-नारियों से सारा समाज मन्दिर भर गया। उत्सव का समाचार लिखने वालों ने लिखा है:-

''कार्यवाही आरम्भ होने से पहले तमाम सेहन और हाल में पैर रखने तक को जगह न रही। हाल में सिर्फ स्त्रियों की निशस्त का प्रबन्ध किया गया था। परदे के लिए चिकें नहीं लगाई गई थीं। एक तरफ पुरुष बैठे थे और दूसरी तरफ स्त्रियां।

''प्रारम्भ में हवन हुआ। फिर प्रार्थना के पश्चात् ईश्वर-दर्शन पर ला. बख्शीराम जी का व्याख्यान हुआ। उसके पश्चात् कन्या महाविद्यालय जालन्धर की कन्याओं ने भजन गाये जिनको सुनकर श्रोतागण अत्यन्त प्रसन्न हुए। पुन: श्रीमान् देवराज जी का आलिमाना और मुअस्सर व्याख्यान 'स्त्री जाति की पतित दशा और उसके सुधार और उद्धार' पर हुआ। इस व्याख्यान में लाहोर के अन्य शिक्षित नागरिकों के अतिरिक्त कुछ यूरोपियन प्रोफेसर भी अपनी पत्नियों के साथ आये थे। व्याख्यान के पश्चात् लाहौर के दृढ़ आर्यसमाजी बैरिस्टर श्रीमान् रोशनलाल जी की धर्मपत्नी श्रीमती हरदेवी ने कन्याओं को पारितोषिक वितरण किये। **उसी समय यह घोषणा भी की गई कि श्रीमति हरदेवी जी ने अपनी सारी निजी जायदाद, जिसका मूल्य 25-30 हजार के लगभग है, कन्या महाविद्यालय के नाम वसीयत कर दी है।** इस समाचार से जनता बहुत प्रसन्न हुई और और करतल ध्वनि से सभा स्थान गूंज उठा।

''दोपहर बाद की कार्यवाही में पहले धर्म-चर्चा हुई जिसमें मा. आत्माराम जी ने एक नास्तिक के प्रश्नों के उत्तर दिये। उसके पश्चात् श्रीमान् ला. मुन्शीराम जी का फाजिलाना व्याख्यान 'वेद ईश्वरीय ज्ञान है' इस मजमून पर हुआ।....जब तक व्याख्यान होता रहा श्रोतागण तस्वीर की तरह बेहस और हरकत बैठे रहे। जो पाक कला और आला असर इनके फाजिलाना व्याख्यान ने हाजरीन के दिलों पर डाला उसका ठीक- ठीक अन्दाजा वही साहबान लगा सकते हैं कि जिन्होंने इस व्याख्यान को दत्तचित्त होकर श्रवण किया हो।

''दूसरे दिन की कार्यवाही के आरम्भ में ला. देवराज जी का मनोहर सरमन हुआ और उसके पश्चात् मेरठ के श्रीमान् पं. तुलसीराम जी स्वामी सम्पादक रसाला 'वेद प्रकाश' का फाजिलाना व्याख्यान

'सच्चे सुख की प्राप्ति' पर हुआ। यह व्याख्यान इतना युक्तिसंगत और विद्वतापूर्ण था कि श्रोतागण बहुत ध्यान से उसे सुनते हे। उसके पश्चात् मा. आत्माराम जी ने वेद प्रचार फंड के लिए अपील की जिस पर वेद प्रचार फंड , गुरुकुल और महाविद्यालय ने (वगैरह के लिए दो हजार पॉच सौ रुपये नकद एकत्र हुआ । इस पर टिप्पणी करते हुए संवाददाता)लिखा है- ''इस कदर चन्दा गुजस्ता चार-पांच सालों में कभी नहीं हुआ था।)''

इस वृत्तान्त में हमने 'सद्धर्म प्रचारक' से जो उद्धरण दिये हैं, उनमें ध्यान देने योग्य एक बात यह है कि उनकी भाषा में संस्कृत और उर्दू के शब्दों का अद्भुत मिश्रण है। पंजाब की इस उर्दू का जन्मदाता सद्धर्म प्रचारक था। उसी समय के मेठ से निकलने वाले 'आर्य समाचार' पत्र की भाषा से जब हम सद्धर्म प्रचारक की भाषा की तुलना करते हैं तब इस नई पंजाबी उर्दू के निर्माण का महत्त्व समझ में आता है। उस समय संस्कृत मिश्रित उर्दू की जा प्रणाली आरम्भ हुई , पंजाबियों द्वारा सम्पादित उर्दू पत्रों में आज तक भी वह प्रचलित है।

26 नवम्बर सायंकाल को दो महत्त्वपूर्ण व्याख्यान हुए। पहला व्याख्यान लाहौर के प्रख्यात वकील पं. रामभज दत्त चौधरी का था जिसका विषय था 'गुरुकुल शिक्षा प्रणाली'। दूसरा व्याख्यान श्रीमान् रोशनलाल जी का अंग्रेजी में हुआ। उसका विषय था 'पश्चिमी दुनिया में अशान्ति और उसका इलाज'। उसके अन्त में भी वक्ता ने गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की चर्चा करते हुए बतलाया था कि संसार के आत्मिक रोगों के निवारण के लिए वही उत्तम शिक्षा प्रणाली है।

लेखकों से निवेदन

इस पत्रिका का उद्देश्य महर्षि मिशन को प्रचारित-प्रसारित करना हैं। आर्य जगत के चिंतकों और लेखकों से निवेदन है कि ऋषि मिशन की पूर्ति में सहयोग हेतु अपनी रचनाओं को प्रकाशनार्थ भिजवाएं।

रचनाएँ महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के पते पर या sampadakmdsprakash@gmail.com के पते पर ईमेल से भी भेजी जा सकती हैं।

—संपादक

(गतांक में हमारे योद्धा महर्षि को कोलकाता प्रवास बांग्ला विद्वानों और लॉड नार्थब्रुक से वार्ता का वर्णन था । इस अंक में कविश्री विमलचन्द्र जी के कवि हृदय ने महर्षि के विभिन्न गणों के लिये सुचयनित उपमाएँ देते हुए उनके कानपुर एवं प्रयाग प्रवास को काव्य में ढाला है ।-सम्पादक)

ऋषिगाथा

"तुम कौन"

मानव जन्म विश्व में होता, मानवता का करे प्रसार।
आया क्यों धरिणी पर तन धर, सोचे मन में करे विचार।।१।।
सो जाते पशु भी भरकर निज, उदर, मही पर विचरण कर।
जगकर दानों को उड़ जाते पंखी, फिर क्यों जन्मा नर।।२।।
प्रणय हेतु पागल द्विरेफ खोला, करता कलि मूक अधर।
विरह वह्नि से कभी न व्याकुल, हाता चातक का अन्तर।।३।।
प्रियतम दर्शन कर खिल जाना, सिखपला देता पाठ कमल।
वर पा लेना, अथवा मिटना, कहता-शलभ दीप पर जल।।४।।
विषय-वासना विरह -मिलन के, अंक लिखे हर अंतर पर।
आकर दो दिन तक क्रीड़ा कर, क्यों जाता नर सब तज कर।।५।।
नर कर बने दु:खी मानव के, दु:ख मिटा कर लें आशीष।
अधर करें आराधन प्रभु का, वाणी गुण गाये जगदीश।।६।।
आँखें प्रिय सुन्दरता देखें, जो विकसी पुष्पों तरू पर।
घन नीलों में सर झीलों में, बालक तन मानव मुख पर।।७।।
हो प्रतिज्ञ दृढ़ विश्वासी, सुख स्वर्ग युक्त करदें भू तल ।
दें प्रकाश झूले पथिकों को, जीवन दीप जला प्रतिपल।।९।।
तूने तन, मन, जाति, देश, रक्षा हित दान किया ऋषिवर।
दीन अनाथों के दु:ख से, रहता तेरा अन्तर जर्जर।।१०।।
घन गर्जन करना भूलें दिन में चमके तारक मंडल।
प्रलय अन्त तक रंगा रहेगा, तब कृत्यों से मानव तल।।११।।
वन वन ठुकराने पर तेरे, आते हृदय राम भगवान्।
अजर अमर है जीवन पक्षी, कहे कृष्ण के गीता गान।।१२।।
विषय वासना त्याग चले, जाने पर स्वामी थे सिद्धार्थ।

जीवन पूरा किया विश्व, अभिषापों के लड़ने के अर्थ।।१३।।
बना शंकराचार्य सदा करता, था विजय हार धारण।
पैगंबर बन किया एक ईश्वर, पर श्रद्धा का अर्पण।।१४।।
तू महर्षि क्राइस्ट बना, आंसू दे दीनों के दु:ख पर।
हंसता था मंसूर बना, विष पीकर सह-सह कर प्रस्तर।।१५।।
भक्ति गान में तू तुलसी, नानक; दादू, श्री सूर, कबीर।
देश वेदि पर दीप जलाता, बनकर-शिवा, प्रताप हमीर।।१६।।
एक हृदय वीणा पर तब जग, सुनता , मृदु भीषण गायन।
वारि ज्वाला, सौगन्ध्य शूलयुत, था स्वामिन्! तेरा जीवन।।१७।।
तू अभिषापित श्यामा राका, क्षण भर में करता पावन!
गूंज उठा जय-जय ध्वनि से मिल , शुभ प्रयाग में गुण गायन।।१८।।
दिन लम्बा इतिहास लिये, दो क्षण भी बन जाते अनमोल।
दो पल में आगमन बधाई, पल में सत्य राम के बोल।।१९।।
आये श्री ऋषिराज कानपुर, प्रयाग में कुछ दिवस ठहर।
टूका घाट जमा आसन प्रभु, चिन्तन में तन्मय अन्तर।।२०।।
श्रीयुत फूलचन्द्र के गृह, पर था श्री स्वामी का उपदेश।
जीवित पितरों का तर्पण ही, करता आया भारत देश।।२१।।
किया सिद्ध तूने प्रमाण देकर, वेदों का-भूमि चलन।
सन्यासी, पर सदा खिलाता, दीनों के दु:ख म्लान सुमन।।२२।।
मानव तर कर तट पा सकता, यदि आई धारा में नाव।
जय पा सकता जगतीतल पर, यदि करले सेवामय भाव।।२३।।
अवसर पर पथ पर रूक कर, आगे बढ़ना ही श्रेयस्कर।
परिवर्तन हित आते रहते, मानव को प्राय: अवसर।।२४।।
रहना सहना जग जीवों में, ऋषि धारण करते परिधान।
केवल अन्तर के भावों से, होता मानव का कल्याण।।२५।।
कहता जग-जन पदचिह्नों से, जंगल बन जाता मंगल।
जन पद में यदि बन्धु मिलन हों, स्वर्ग सुखद बनता भू:तल।।२६।।

(क्रमश:)

।। ओ३म् ।।

स्वाध्याय

अथऋग्वेदादिभाष्यभूमिका

वेदविषयविचारः–२–डॉ0 रामनारायणजी शास्त्री

अपरा और परा दो विद्या है। यह परा विद्या अपरा विद्या से अत्यंत उत्तम है, क्योंकि अपरा का ही उत्तम फल परा विद्या है। यहाँ महर्षिस्वामी दयानंद सरस्वती ने मुंडकोपनिषद के आधार पर अपरा विद्या में चारों वेद और छह वेदांगों की गणना की है। इस तथ्य को इस भाँति भी समझा जा सकता है कि जैसे अपरा और परा के नाम से दो विद्या हैं, वैसे ही शब्द और पर के नाम से ब्रह्म भी दो हैं। अपरा विद्या में जैसे चारों वेद और वेदांगों को गिना जा रहा है, उसी प्रकार शब्द ब्रह्म में भी वेद वेदांगों की गणना है। और चूंकि अपरा विद्या का ही उत्तम फल है परा विद्या; इसलिए शब्द ब्रह्म के बिना परब्रह्म को नहीं जाना जा सकता; जैसे कि प्रमाण भी है **ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः। द्वै ब्राह्मणी वेदितव्ये शब्दब्रह्म परं च यत्। शब्दे ब्रह्माणि निष्णातः परम् ब्रह्माधिगच्छति।।**

मोक्ष या परब्रह्म की प्राप्ति अर्थात् ईश्वरानुभव ही वेद का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है। इसमें प्रमाणों की श्रंखला में आगे और भी प्रमाण ऋषिवर उपस्थापित करते हैं।

"अन्यच्च–

तद्विष्णोः परमंपदम् सदापश्यंतिसूरयः।दिवीव चक्षुराततम्।।१।।"

महर्षि इसके पते के रुप में ऋग्वेद का पता इस प्रकार लिखते हैं–"**ऋग्वेदे।अष्टके१। अध्याये२।वर्गे ७। मंत्रः५।।**" ऋग्वेद का संयोजन क्रम दो प्रकार का है। एक है अष्टक अध्याय वर्ग और मंत्र। दूसरा है मंडल सूक्त और मंत्र। आज प्रायः सर्वत्र मंडल सूक्त मंत्र वाला संयोजन कम ही प्रचलित है अतः सभी को यह सुगम प्रतीत होता है। वैसे मूल संहिता तथा भाष्यों में दोनों ही प्रकार का संयोजन क्रम लिखा हुआ मिलता है। मंडल वाले संयोजन क्रम से यह मंत्र ऋग्वेदमें१।२२।२० पर है। यह मंत्र यजुर्वेद में भी है। वहाँ पर यह छठे अध्याय का पाँचवा मंत्र है। यजुर्वेद का भाष्य करतेहुए स्वामीजी महाराज इस मंत्र का पदार्थ इस भांति लिखते हैं–पदार्थः – (तत्) (विष्णोः) पूर्वमंत्रप्रतिपादितस्य जगदुत्पत्तिस्थितिसंहृतिविधातुः परमेश्वरस्य (परमम्) सर्वोत्ष्टम् (पदम्) प्राप्तुमर्हम् (सदा) सर्वस्मिन् काले (पश्यंति) अवलौकन्ते (सूरय) वेदविदः स्तोतारः। सूरिरिति स्तोतृनामसु पठितम्। (निघण्टु ३।१६।।) (दिवीव) आदित्यप्रकाश इव (चक्षुः) चश्टेऽनेनतत् (आततम्) व्याप्तिमत्।। अयंमंत्रः शतपथे.३।७01।८। व्याख्यातः।।

अब हम अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार महर्षि की शब्दावली को यथावत् आपके स्वाध्याय के लिए उपस्थापित करते हैं।

"अस्यायमर्थः —यत् (विष्णोः) व्यापकस्य परमेश्वरस्य (परमम्) प्रकृष्टानन्दस्वरूपं (पदं) पदनीयं सर्वोत्तमोपायैर्मनुष्यैः प्रापणीयं मोक्षाख्यमस्तितत् (सूरयः) विद्वांसः (सदा) सर्वेषु कालेषु पश्यन्ति, कीदृशं तत् ? (आततम्) आसमन्तात् ततंविस्तृतं यद् देशकालवस्तुपरिच्छेदरहितमस्ति, अतः सर्वैः सर्वत्र तदुपलभ्यते, तस्य ब्रह्मस्वरूपस्य विभुत्वात्। कस्यांकिमिव ? (दिवीव चक्षुराततम्) दिवि मार्त्तण्डप्रकाशे नेत्रदृष्टेः व्याप्तिर्यथा भवति तथैव तत्पदं ब्रह्मापि वर्तते, मोक्षस्य च सर्वस्मादधिकोत्कृष्टत्वात् तदेव द्रष्टुं प्राप्तुमिच्छन्ति । अतो वेदाः विशेषेण तस्यैव प्रतिपादनं कुर्वन्ति ।

एतद्विषयकं वेदान्त सूत्रं व्यासोण्याह–

'तनुसमन्वयात् ।।' अ०१। पा०१। सू०४।।

अस्यायमर्थः —तदेव बह्मं सर्वत्र वेदवाक्येषु समन्वितं प्रतिपादितमस्ति। क्वचित्साक्षात् क्वचित् परम्परयाच। अतः परमाऽर्थो वेदानां ब्रह्मैवास्ति।

तथा यजुर्वेदे प्रमाणम्–

"यस्मान्न जातः परोऽअन्याऽअस्ति यऽ आविवेश भुवनानि विश्वा।
प्रजापतिः प्रर्जियासँ्रराणस्त्रीणि ज्योतीँषि सचते स षोडशी।।य० अ०८। मं० ३६।।

एतस्यार्थः – (यस्मात्) नैव परब्रह्मणः सकाशात् (परः) उत्तमः पदार्थः (जातः) प्रादुर्भूतः प्रकटः (अन्यः)भिन्नः कश्चिदप्यस्ति। (प्रजापतिः) प्रजापतिरिति ब्रह्मणो नामास्ति प्रजापालकत्वात् (य आविवेश भु०) यः परमेश्वरः (विश्वा) विश्वानि सर्वाणि (भुवनानि) सर्वलोकान् (आविवेश) व्याप्तवानस्ति (सँ्रराणः) सर्वप्राणिभ्योऽत्यन्तं सुखं दत्तवान् सन् (त्रीणिज्योतीँषि) त्रीण्यग्निसूर्यविद्युदाख्यानि सर्वजगत्प्रकाशकानि (प्रजया) ज्योतिषोऽन्यया सृष्ट्या सह तानि (सचते) समवेतानि करोति कृतवानस्ति (सः) अतः स एवेश्वरः (षोडशी) येन षोडशकला जगति रचितास्ता विद्यन्ते यस्मिन्यस्य वा तस्मात्स षोडशीत्युच्यते। अतोऽयमेव परमोऽर्थो वेदितव्यः।

"ओमित्येतदक्षरमिदँ सर्वतस्योपव्याख्यानम्।। इदंमाण्डूक्योपनिषद्वचनमस्ति ।।

अस्यायमर्थः–ओमित्येतद्यस्य नामास्ति तदक्षरम्। यन्न क्षीयते कदाचिद्यच्चराचरं जगदश्नुते व्याप्नोति तद् ब्रह्मैवास्तीति विज्ञेयम्। अस्यैव सर्वैर्वेदादिभिः शास्त्रौः सकलेन जगता वोपगतं व्याख्यानं मुख्यतया कियतेऽतोऽयं प्रधानविषयोऽस्तीत्यवधर्यम्।

किं च नैव प्रधानस्याग्रेऽप्रधनस्य ग्रहणंभवितुमर्हति। 'प्रधानाप्रधानयोः प्रधाने कार्यसम्प्रत्ययः 'इति व्याकरणमहाभाष्यवचनप्रामाण्यात्। एवमेव सर्वेषां

वेदानामीश्वरे मुख्यऽर्थेमुख्यतात्पर्यमस्ति। तत्प्राप्तिप्रयोजना एव सर्व उपदेशाः सन्ति । अतः तदुपदेशपुरः सरेणैव त्रयाणां कर्मोपासनाज्ञानकाण्डानां पारमार्थिकव्यावहारिक फलसिद्धये यथायोग्योपकाराय चानुष्ठानं सर्वैर्मनुष्यैर्यथावत् कर्तव्यमिति ।

भाषार्थ–और भी इस विषय में ऋग्वेद का प्रमाण है कि–(तद्वि0) । (विष्णुः)अर्थात् व्यापक जो परमेश्वर है उसका (परमं) अत्यन्त उत्तम आनन्दस्वरूप (पदं) जो प्राप्ति होने के योग्य अर्थात् जिसका नाम मोक्ष है उसको (सूरयः) विद्वान् लोग (सदा पश्यन्ति) सब काल में देखते हैं। वह कैसा है कि सबमें व्याप्त हो रहा है, और उसमें देश काल और वस्तु का भेद नहीं है। अर्थात् उस देश में है और इस देश में नहीं, तथा उस काल में था और इस काल में नहीं, उस वस्तु में है और इस वस्तु में नहीं, इसी कारण से वह पद सब जगह में सबको प्राप्त होता है, क्योंकि वह ब्रह्म सब ठिकाने परिपूर्ण है। इसमें यह दृष्टान्तहै कि (दिवीव चक्षुराततम्) जैसे सूर्य का प्रकाश आवरण रहित आकाश में व्याप्त होता है, और जैसे उस प्रकाश में नेत्र की दृष्टि व्याप्त होती है, इसी प्रकार परब्रह्म पद भी स्वयं प्रकाश,सर्वत्र व्याप्तवान् हो रहा है। उस पद की प्राप्ति से कोई भी प्राप्ति उत्तम नहीं है। इसलिये चारो वेद उसी की प्राप्ति कराने के लिए विशेष करके प्रतिपादनकर रहे हैं।

इस विषय में वेदान्तशास्त्र में व्यासमुनि के सूत्र का भी प्रमाण है–(तनु समन्वयात्)। सब वेद वाक्यों में बह्म का ही विशेष करके प्रतिपादन है। कहीं कहीं साक्षात् रूप और कहीं कहीं परम्परा से। इसीकारण से वह परब्रह्म वेदों का परमअर्थहै।

तथा इस विषय में यजुर्वेद का भी प्रमाण है कि–(यस्मान्न जातः0) । जिस परब्रह्म से (अन्यः) दूसरा कोई भी (परः) उत्तम पदार्थ (जातः) प्रकट (नास्ति) अर्थात् नहीं है। (यआविवेश भु0) जो सब विश्व अर्थात् सब जगह में व्याप्त हो रहा है (प्रजापतिः प्र0) वही सब जगत् का पालनकर्त्ता और अध्यक्ष है, जिसने (त्रीणिज्योतीँषि) अग्नि, सूर्य और बिजुली इन तीन ज्योतियों को प्रजा के प्रकाश के लिए (सचते) रचके संयुक्त किया है, और जिसका नाम (षोडशी) है अर्थात् (१) ईक्षण जो यथार्थ विचार (२) प्राण जो कि सब विश्वका धारण करने वाला (३) श्रद्धा –सत्य में विश्वास (४) आकाश (५) वायु (६) अग्नि (७) जल (व८) पृथिवी (९) इन्यि (10) मन अर्थात् ज्ञान (११) अन्न (१२) वीर्य अर्थात् बल और पराव्म (१३) तप अर्थात् धर्मानुष्ठान सत्याचार (१४) मन्त्र अर्थात् वेदविद्या (१५) कर्मअर्थात् सबचेष्टा (१६) नाम अर्थात् दृश्य और अदृश्य पदार्थों की संज्ञा, ये ही सोलह कला कहाती हैं। ये सब ईश्वर ही के बीच में हैं, इससे उसको षोडशी कहते हैं। इन षोडश कलाओं का प्रतिपादन प्रश्नोपनिषद् के ६ छठे प्रश्न में लिखा है।"

इससे परमेश्वर ही वेदों का मुख्य अर्थ है और उस से पृथक् जो यह जगत् है सो वेदों का गौण अर्थहै। और इन दोनों में से प्रधान का ही ग्रहण होता है। इससे क्या आया कि वेदों का मुख्य तात्पर्य परमेश्वर ही की प्राप्ति कराने और प्रतिपादन करने में है। उस

परमेश्वर के उपदेश रूप वेदों से कर्म, उपासना और ज्ञान इन तीनों काण्डों का इस लोक और परलोक के व्यवहारों के फलों की सिद्धि और यथावत् उपकार करने के लिए सब मनुष्य इन चार विषयों के,अनुष्ठानों में पुरुषार्थ करें, यही मनुष्य–देह धरणकरने के फलहैं।"

पुरुषार्थचतुष्ट्य की सिद्धि ही मानव जीवन का मुख्य उद्देश्य है। पुरुषार्थचतृष्ट्य में परम पुरुषार्थ तो मोक्ष ही है। अर्थ, काम और धर्म– ये तीनों तो मोक्ष प्राप्ति के साधन है।

...क्रमशः।

वार्षिक / आजीवन शुल्क भिजवाएँ

'महर्षि दयानन्द स्मृतिप्रकाश' आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द प्रतिपादित वैदिक एवं आर्शसिद्धान्तों और विचारों को प्रसारित कर विश्व को आर्य बनाने में योगदान देने के लिए महर्षि दयानन्द स्मृति भवन न्यास, जोधपुर द्वारा आरम्भ की गई है। पत्र में परमात्मा, वेद, दयानन्द और आर्यसमाज पर केन्द्रित सामगी ही प्रकाशित की जाती है। इन्हीं पर केन्द्रित रचनाओं की प्रतीक्षा सदैव रहेगी। प्रतिमाह इसके प्रकाशन पर बड़ी राशि व्यय होती है। न्यास की आय का प्रमुख स्रोत आर्यजनों का दान है। किन्तु न्यास के विभिन्न प्रकल्पों के संचालन में होने वाले व्यय की पूर्ति में सात्विकदान की आवश्यकता निरन्तर बनी रहती है।

यह पत्र **'महर्षि दयानन्द स्मृतिप्रकाश'** लागत मूल्य से बहुत कम राशि पर वितरित किया जाता है। इस पर भी ग्राहकगण पत्र की शुल्क राशि भिजवाने में प्रमाद करते हैं। इससे होने वाली कठिनाई सुधी ग्राहक अनुभव करें। हमारे द्वारा व्यक्तिगत रूप से शुल्क का स्मरण कराने पर ग्राहक असंतोष भी व्यक्त करते हैं। यदि समर्थजन आगे आकर इस पत्र को आत्मनिर्भर बनाने का यत्न करें तो अच्छी बात है, अन्यथा अपना शुल्क समय पर भिजवाने की कृपा करें। कई बार 'भेज देंगे' में दीर्घावधि निकल जाती है। शुल्क भेजने में आपका विशेष प्रयास न्यास का सहायक है।

हे प्रभो! आर्यजनों को दानीबना, दान के पात्र नहीं !ताकि पत्रिका के शुल्क के लिए ग्राहकों को बार–बार स्मरण न कराना पड़े।

न्यास का यह मुख पत्र यदि आपको अच्छा लगता है, तो इसके ग्राहक जोड़ कर हमारा उत्साहवर्द्धन करें। यदि पत्र से कोई शिकायत है तो सबसे पहले अवगत करावें।

–मुखपत्र प्रबंधन, म.द.स.स्मृ.भ. न्यास, जोधपुर।

१३७वाँ ऋषि स्मृति सम्मेलन संकल्प दिवस के रूप मेंमनाया।

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर के तत्ववाधान में वेदोद्धारक व आर्यसमाज के संस्थापक दयानन्द सरस्वती को जोधपुर में २६सितम्बर १८८३ में विष दिये जाने की घटना की स्मृति में १३७ वॉ ऋषि स्मृति सम्मेलन संकल्प दिवस के रूप में मनाया।

न्यास के मंत्रीजी ने बताया कि वुहान कोरोनावायरस के प्रकोप में जारी प्रशासनिक मार्गदर्शन को ध्यान में रखते हुए भारत भर से आर्यविद्वानों को वेबिनार के माध्यम से आमंत्रित करते हुए सम्मेलन को संबोधितकरते हुए विश्व के समस्त आर्यसमाजों की शिरोमणि संस्था 'सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा' के प्रधान श्री सुरेशचन्द्र जी आर्य ने देश दुनिया की विषम और विशैली स्थितियों में, कुरीतियों, अंधविश्वासों और अत्याचार के युग में महर्षि द्वारा बताये वैदिकमार्ग को ही अमृत बताते हुए इस पर चलने की जरूरत बताई।

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा बनायी श्रीमती परोपकारिणी सभा के प्रधान आर्यविद्वान् डॉ० वेदपालजी ने महर्षि के समय के भारत और जोधपुर की परिस्थितियों का परिचय देते हुए कहा कि उस समय की भयानक खरतपतवार को हटाने के लिए महर्षि ने खण्डन के तीक्ष्ण खाण्डे का प्रयोग किया। इस खण्डन में अपना हित समझने में असमर्थ लोगों ने अमृतदाता महर्षि को षड्यंत्र पूर्वक विष दे दिया, जिसके कलंक से मुक्ति महर्षि की मान्यताओं को स्थापित करके ही मिल सकती है।

मुख्य उदबोधन में कमल किशोर आर्य ने सम्बोधित करते हुए महर्षि के सात गुणों सत्य के प्रति आग्रह, विवेकशीलता, वेद व ईश्वर पर अटूटविश्वास, ऐषणाओं से परे, परम योगी, परोपकार और ऋषित्व का वर्णन करते हुए वर्तमान समय में परोपकार की महत्ता हेतु संकल्पित होने का आव्हान किया। सभा को श्री विमलशास्त्री ने सम्बोधित करते हुए सार्वदेशिक स्तर पर चल रहे प्रकल्पों की जानकारी दी। कार्यक्रम में माता शांतिदेवी जी, श्री अशोक आर्य, अभिमन्यु आर्य व श्री विक्रमसिंह आर्य ने ऋषि गुणगान के गीत प्रस्तुत किए। न्यासमंत्री आर्य किशनलाल गहलोत ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

डॉ कलाम के कलमे

•एक मूर्ख जीनियस बन सकता है यदि वो समझता है कि वो मूर्ख है, लेकिन एक जीनियस भी मूर्ख बन सकता है यदि वो समझता है कि वो तो जीनियस है।

•शिक्षण एक बहुत ही महान पेशा है जो किसी व्यक्ति के चरित्र, क्षमता, और भविष्य को आकार देता हैं। अगर लोग मुझे एक अच्छे शिक्षक के रूप में याद रखते हैं, तो मेरे लिए ये सबसे बड़ा सम्मान होगा।

•अंततः वास्तविक अर्थों में शिक्षा सत्य की खोज है। यह ज्ञान और आत्मज्ञान से होकर गुजरने वाली एक महत्वपूर्ण और अंतहीन यात्रा है।

•असली शिक्षा एक इंसान की गरिमा को बढ़ा देती है और उसके स्वाभिमान में वृद्धि करती है। यदि हर इंसान द्वारा शिक्षा के वास्तविक अर्थ को समझ लिया जाता और उस शिक्षा को मानव गतिविधि के प्रत्येक क्षेत्र में आगे बढ़ाया जाता तो यह दुनिया रहने लिए कहीं ज्यादा अच्छी जगह होती।

• एक महान शिक्षक बनने के लिए तीन बातें सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण होती हैंरू – ज्ञान, जुनून और करुणा।

•शिक्षाविदों को छात्रों के बीच परीक्षणध्अनुसंधान की भावना, रचनात्मकता, उद्यमशीलता और नैतिक नेतृत्व की क्षमता का निर्माण करना चाहिए।

•किसी विद्यार्थी की सबसे जरूरी एवम् महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक विशेषता है – प्रश्न पूछना। इसलिए विद्यार्थियों को प्रश्न पूछने में कोई संकोच नहीं करना चाहिए।

•निपुणता एक लगातार चलने वाली प्रक्रिया है यह एक घटना मात्र नहीं है।

•यदि चार बातों का पालन किया जाए – एक महान लक्ष्य बनाया जाए, ज्ञान अर्जित किया जाए, कड़ी मेहनत की जाए, और दृढ़ रहा जाए, तो कुछ भी हासिल किया जा सकता हैं।

•जीवन में कठिनाइयाँ हमे बर्बाद करने नहीं आती है, बल्कि यह हमारी छुपी हुई सामर्थ्य और शक्तियों को बाहर निकलने में हमारी मदद करती है। कठिनाइयों को यह जान लेने दो कि आप उससे भी ज्यादा कठिन हो।

•इंतजार करने वाले को उतना ही मिलता है, जितना कि कोशिश करने वाले छोड़ देते हैं।

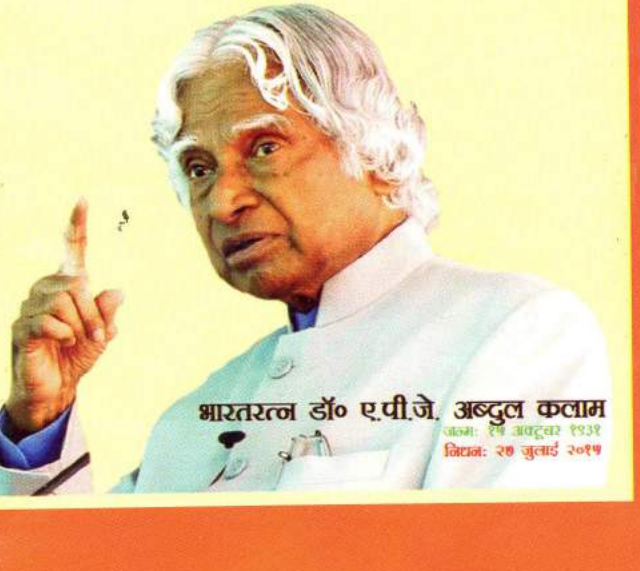

Postal Reg. Jodhpur/434/2018-20

Date Of Posting 9,10-10-2020
Date Of Print 5-10-2020

जोधपुर की 112 वर्ष पुरानी गौशाला में दान व समय देकर पुण्य कमाएँ। दान आय कर की धारा 80 जी में छूट प्राप्त है।

तुम्हारा तन, मन, धन , गाय आदि की रक्षारूप परोपकार में न लगे तो किस काम का है? देखो! परमात्मा का स्वभाव है कि जिसने सब विश्व और सब पदार्थ परोपकार ही के लिये रच रखे है, वैसे तुस भी अपना तन, मन, धन परोपकार ही के अर्पण करो।

—महर्षि दयानन्द सरस्वती 'गो करूणानिधि में''

यूको बैंक खाता संख्या 05630110041192 मंडोर शाखा

सत्वाधिकारी महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के लिए प्रकाशक व मुद्रक विजयसिंह भाटी द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, महर्षि दयानन्द मार्ग, मोहनपुरा पुलिया के पास जोधपुर (राज.) से प्रकाशित एवं सैनिक प्रिण्टर्स, मकराणा मौहल्ला केरू हाऊस जोधपुर फोन 9829392411से मुद्रित।

सम्पादक फोन नं. 9460649055